हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०)

माइल ख़ैराबादी

विषय-सूची

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

'अल्लाह कृपाशील दयावान के नाम से'

भूमिका

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) और ख़ुलफ़ाए राशिदीन[1] (रज़ि०) की सरबराही इस्लामी राज की जो व्यवस्था चालीस सालों तक चलती रही, उसके विधान ा सबसे पहली ख़ास बात यह थी कि उसमें सिर्फ़ ज़बान ही से यह नहीं कहा ता था, बल्कि सच्चे दिल से यह माना भी जाता था, और अमली तौर से इस क़ीदे और यक़ीन का पूरा सबूत भी दिया जाता था कि मुल्क ख़ुदा का है, मुल्क रहनेवाले ख़ुदा की रिआया हैं और शासन उनके मामले में ख़ुदा के सामने जवाबदेह । शासन इस रिआया का मालिक नहीं है और रिआया उसकी ग़ुलाम नहीं है । किमों का काम सबसे पहले ख़ुदा की बन्दगी और ग़ुलामी का इक़रार करना । फिर यह उसकी ज़िम्मेदारी है कि ख़ुदा की रिआया पर उसका क़ानून लागू र ।

इस्लामी राज का मक़सद ख़ुदा की ज़मीन में उन नेकियों को क़ायम करना और ढ़ावा देना है, जो ख़ुदा को पसंद हैं । और उन बुराइयों को दबाना और मिटाना जो ख़ुदा को नापसंद हैं । मगर इनसानी बादशाहत का रास्ता अपनाने के बाद कूमत का मक़सद दूसरे मुल्कों को फ़तह करना, रिआया को अपना ग़ुलाम बनाना ौर लोगों से टैक्स वसूल करके दुनिया के ऐशो आराम का लुत्फ़ उठाने के सिवा छ नहीं था । ख़ुदा का कलिमा बुलंद करने की ख़िदमत बादशाहों ने कम ही जाम दी । उनके और उनके अफ़सरों, हाकिमों और दरबारियों के हाथों भलाइयाँ म और बुराइयाँ बहुत ज़्यादा फैलीं ।

इस्लामी राज की आत्मा ख़ुदा का डर, ईमानदारी और परहेज़गारी थी, जिसका बसे बड़ा नमूना ख़ुद राज का प्रबंधकर्ता होता था । हुकूमत के अफ़सर क़ाज़ी ौर सिपहसालार सब इसी जज़्बे से सरशार होते थे और इसी जज़्बे से वे पूरे माज को सरशार करते थे । लेकिन बादशाही की राह पर पड़ते ही मुसलमानों ो हुकूमतों और उनके सरबराहों (इन्तिज़ाम करनेवालों) ने क़ैसर और किसरा के ा-ढंग और ठाठ-बाठ अपना लिए । इनसाफ़ की जगह बेइनसाफ़ी और ल्म-ज़बरदस्ती का ग़लबा होता चला गया । परहेज़गारी की जगह दुराचार व कर्म और राग-रंग व ऐशो-इशरत का दौर-दौरा शुरू हो गया । हराम व हलाल

ख़ुलफ़ाए राशिदीन से मुराद है— ख़लीफ़ा हज़रत अबू बक्र (रज़ि०), हज़रत उमर (रज़ि०), हज़रत उसमान (रज़ि०) और हज़रत अली (रज़ि०)।

की तमीज़ से हाकिमों को वास्ता न रहा । राजनीति का अख़लाक़ से रिश्ता टूटत चला गया । ख़ुदा से डरने के बजाए हाकिम लोग ख़ुदा के बंदों को अपने आ से डराने लगे और लोगों के ईमान व ज़मीर को जगाने के बजाए, उनको अप बख़्शिशों के लालच से ख़रीदने लगे ।

इस्लामी क़ानून का संगे बुनियाद यह है कि हुकूमत लोगों की स्वतंत्रराय क़ायम हो । कोई आदमी अपनी कोशिश से सत्ता पर क़ब्ज़ा न जमा सके, बल्कि लोग आपसी मशविरे से बेहतरीन आदमी को चुनकर सत्ता उसके सुपुर्द कर दें बैअत सत्ता पर क़ब्ज़े का नतीजा न हो बल्कि इसका सबब हो । बैअत हासिल होने में आदमी की अपनी किसी कोशिश या साज़िश का दख़ल न हो । लो बैअत करने या न करने के मामले में पूरी तरह आज़ाद हों । जब तक किसी आदम को बैअत हासिल न हो वह सत्ता में न आए । और जब लोगों का विश्वास उ पर से उठ जाए तो वह सत्ता से चिमटा न रहे, बल्कि ख़ुशी-ख़ुशी उसे छोड़ दे ख़ुलफ़ाए राशिदीन में हर एक इसी क़ायदे के मुताबिक़ सत्ता में आया ।

दूसरा सबसे ज़रूरी उसूल इस क़ानून का यह है कि हुकूमत मशविरे से च जाए और मशविरा उन लोगों से किया जाए जिनके इल्म, परहेज़गारी और सह राय पर आम लोगों को विश्वास हो, जिनसे उम्मीद हो कि वे हमेशा सच्चाई के साथ अपनी राय देंगे और जो हर मामले में अपने इल्म और ज़मीर के मुताबिक़ पूरी ईमानदारी के साथ मशविरा देंगे और जिनपर किसी को भी यह शक हो कि वे हुकूमत को किसी ग़लत रास्ते पर जाने देंगे ।

इस क़ानून का तीसरा उसूल यह था कि लोगों को अपनी राय ज़ाहिर कर की पूरी आज़ादी थी । भलाई को फैलाने और बुराई से रोकने को इस्लाम ने ह मुसलमान का हक़ ही नहीं बल्कि उसका फ़र्ज़ क़रार दिया है । इस्लामी समाज और इस्लामी राज़ का सही रास्ते पर चलना इस बात पर निर्भर करता है कि लोग के ज़मीर और उनकी ज़बानें आज़ाद हों, वे हर ग़लत काम पर बड़े से बड़े आदम को टोक सकें और हक़ बात बिना झिझक कह सकें ।

चौथा उसूल जो इस तीसरे उसूल के साथ लाज़मी ताल्लुक़ रखता है यह कि ख़लीफ़ा और उसकी हुकूमत ख़ुदा और उसके बंदों के सामने जवाबदेह है ।

पाँचवाँ उसूल इस्लामी क़ानून का यह है कि बैतुलमाल ख़ुदा का माल औ मुसलमानों की अमानत है, जिसमें कोई चीज़ हक़ की राह के सिवा किसी दूस राह से न आनी चाहिए । ख़लीफ़ा का हक़ उस माल में उतना ही है, जितन क़ुरआन की रौशनी में माले यतीम में उसके वली का होता है । (यानी जो आदम ज़रूरत भर आमदनी के व्यक्तिगत साधन रखता हो वह इस माल से वेतन ले

ार्माए और जो वाक़ई ज़रूरतमंद हो वह उतना ही वेतन ले जिसे हर समझदार ते न्याय संगत माने। ख़लीफ़ा उसकी एक-एक पाई की आमद और ख़र्च का ब देने का ज़िम्मेदार है और मुसलमानों को उससे हिसाब माँगने का पूरा-पूरा है।

छठा उसूल इस क़ानून का यह है कि देश में क़ानून (यानी ख़ुदा और रसूल ० के क़ानून) की हुकूमत होनी चाहिए। किसी को भी क़ानून से ऊपर न चाहिए और न ही किसी को क़ानून की हदों से बाहर जाकर काम करने ह़क़ होना चाहिए। एक आम आदमी से लेकर हाकिमों तक सबके लिए एक ानून होना चाहिए और सब पर उसे बेलाग तरीक़े से लागू होना चाहिए। फ़ के मामले में किसी के साथ कोई भेदभाव का बरताव न किया जाना चाहिए। ालतों को इनसाफ़ के मामले में हर दबाव से पूरी तरह आज़ाद होना चाहिए।

ुसलमानों में हक़ और मरतबे के लिहाज़ से पूरी बराबरी इस्लामी क़ानून का ाँ उसूल है, जिसे आरम्भिक इस्लामी राज में (यानी नबी करीम सल्ल० और ख़लीफ़ाओं रज़ि० के ज़माने में) पूरी ताक़त के साथ लागू किया गया था। मानों के बीच वंश, क्षेत्र, भाषा आदि का कोई भेदभाव न था। क़बीले, दान और हस्बो नस्ब के लिहाज़ से किसी को किसी पर कोई बड़ाई हासिल ा। ख़ुदा और रसूल (सल्ल०) के माननेवाले सब लोगों के अधिकार बराबर ौर सभी की हैसियत बराबर थी और अगर एक-दूसरे पर कोई बड़ाई हासिल ी तो वह किरदार, अख़लाक़, सलाहियत और ख़िदमत की बुनियाद पर थी।
क महान विचारक (Philosopher) के एक लेख का यह कुछ हिस्सा हमारी ब "हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०)" के लिए बेहतरीन भूमिका है। ो ज़हन में रखकर इस किताब का अध्ययन किया जाए तो नज़र आएगा कि फ़ाए राशिदीन (रज़ि०) के बाद हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ही हले ख़लीफ़ा हैं, जिन्होंने इस्लामी क़ानून के उसूलों को हर वक़्त नज़र के रखा और समाज व राज के निर्माण के लिए उन्हीं उसूलों को मार्गदर्शक ा।
अल्लाह तआला से हमारी दुआ है कि हम उन्हीं उसूलों पर समाज और राज र्माण का चलता-फिरता नमूना अपनी आँखों से देख लें। आमीन!

—माइल ख़ैराबादी

परिचय

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के बाद हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०), हज़रत मर फ़ारूक़ (रज़ि०), हज़रत उसमान (रज़ि०) और हज़रत अली (रज़ि०) क्रमशः ख़लीफ़ा हुए। हज़रत अली (रजि०) के बाद ख़िलाफ़त पर बनी उमैया ख़ानदान ा क़ब्ज़ा हो गया। बनी उमैया के ख़ानदान के ख़लीफ़ाओं में हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) सातवें ख़लीफ़ा हैं। इनका सिलसिला इस प्रकार है—

हज़रत मुआविया, यज़ीद, मरवान, अब्दुल मलिक, वलीद, सुलैमान और उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०)।

अल्लाह तआला ने उमैया ख़ानदान के तीसरे ख़लीफ़ा मरवान को जो औलाद ी थी, उसमें अब्दुल मलिक और अब्दुल अज़ीज उसके दो बेटे बड़े ख़ुशक़िस्मत निकले। अब्दुल मलिक उसके बाद ख़लीफ़ा हुए और अब्दुल अज़ीज़ बीस-इक्कीस ाल मिस्र जैसे ख़ुशहाल सूबे (राज्य) के गवर्नर रहे। कहते हैं कि इस्लाम की ारीख़ में अब्दुल अज़ीज़ के अलावा कोई दूसरा आदमी इतने दिनों तक गवर्नर रह सका। उन्होंने अपनी ज़िन्दगी बड़ी शान से गुज़ारी। अल्लाह तआला ने नकी बड़ी-बड़ी तमन्नाएँ पूरी कीं और उन्होंने बड़े शानदार कारनामे अंजाम दिए। ज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) इन्हीं ख़ुशनसीब गवर्नर अब्दुल अज़ीज बिन मरवान के बेटे थे।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़(रह०) की माँ एक ऐसी बुज़ुर्ग औरत की बेटी ीं, जिनके बारे में इतिहास की किताबों में एक बहुत-ही दिलचस्प और नसीहत भरा हुआ क़िस्सा बयान किया गया है। कहते हैं कि एक दिन दूसरे ख़लीफ़ा ज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) रात के वक़्त अपने ग़ुलाम असलम के साथ लोगों े हालात मालूम करने के लिए निकले। आप गश्त लगाते-लगाते एक जगह ककर बैठ गए। पास ही एक घर था। घर के अन्दर से आवाज़ आई :—

"बेटी ! उठकर दूध में पानी मिला दो।"

दूसरी आवाज़ः "अमीरुल मोमिनीन का हुक्म है कि दूध में पानी न मिलाया ाए।"

पहली आवाज़ः "इस वक़्त अमीरुल मोमिनीन देख नहीं सकते, तुम दूध में ानी मिला दो !"

दूसरी आवाज़ : "ख़ुदा की क़सम ! ऐसा नहीं हो सकता कि मैं अमीरुल मोमिन का हुक्म मानने का दावा करूँ और उनकी पीठ पीछे उनके हुक्म के ख़िलाफ़ करूँ

हज़रत उमर (रज़ि०) ने ये बातें सुनी और सुबह को तहक़ीक़ कराई । मा हुआ कि घर में एक कुँवारी लड़की और उसकी बेवा माँ रहती हैं । हज़रत उ (रज़ि०) ने अपने लड़कों को बुलाया । उन्हें रात की कहानी सुनाई और कहा—

> "अगर मुझे निकाह की ज़रूरत होती तो मैं ख़ुद उस लड़की से शादी करता, लेकिन तुममें जो पसन्द करे उससे मैं उसका निकाह कर सकता हूँ ।"

हज़रत उमर (रज़ि०) के बेटों में सिर्फ़ आसिम (रज़ि०) ने अपने को पेश कि और हज़रत उमर (रज़ि०) ने इनके साथ उस नेक लड़की का निकाह कर दिया उस लड़की से उम्मे आसिम नामी एक दीनदार बेटी पैदा हुई । उम्मे आसिम शादी मिस्र के गवर्नर अब्दुल अज़ीज़ बिन मरवान के साथ हुई । यही उम्मे-आसि हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की माँ थीं ।

इस संक्षिप्त परिचय से मालूम होता है कि हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ी (रह०) को अगर एक तरफ़ अब्दुल अज़ीज़, अब्दुल मलिक, वलीद और सुलैम जैसे शानो शौकतवाले हुक्मरानों से ताल्लुक़ रहा तो दूसरी तरफ़ हज़रत उमर फ़ारू (रज़ि०) के प्रशिक्षित (तर्बियतयाफ़्ता) अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०), अब्दुर्रहम आसिम और उम्मे आसिम जैसी मनहा हस्तियों से संबंध रहा । दीन और दुनि की इन महान हस्तियों का असर हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की ज़िंद पर क्या पड़ा ? इसका जवाब उनकी चालीस साल की वह ज़िंदगी है, जिस झलकियाँ इस किताब में पेश की जा रही हैं ।

पैदाइश और तालीम व तरबियत

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) सन् 61 या सन् 62 हि० में अपने ननिहाल मदीना में पैदा हुए। वहीं आपने अपना बचपन गुज़ारा, वहीं तालीम हासिल की और वहीं हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) जैसे अल्लाह से डरनेवाले परहेज़गार बुज़ुर्ग की देख-रेख में तरबियत पाई ।

तालीम व तरबियत के ज़माने में एक बार उनके बाप अब्दुल अज़ीज़ बिन मरवान ने मिस्र से उम्मे-आसिम को लिखा कि बच्चे को लेकर मिस्र चली आएँ । उम्मे आसिम ने ख़त अपने चचा हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) को दिखाया । उन्होंने कहा कि तुम चली जाओ, लेकिन बच्चे को हमारे पास छोड़ जाओ, यह हर बात में हमसे मिलता-जुलता है ।

चचा का यह मशविरा पाकर उम्मे आसिम शौहर के पास मिस्र चली गईं । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) मदीना में रह गए । अब्दुल अज़ीज़ ने बेटे को अभी तक देखा नहीं था । बीवी से पूछा तो उन्होंने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) की बात दुहरा दी । अब्दुल अज़ीज़ बहुत ख़ुश हुए । अपने भाई ख़लीफ़ा अब्दुल मलिक को सारा हाल लिख भेजा । उसने एक हज़ार दीनार महाना वज़ीफ़ा मुक़र्रर कर दिया ।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ज़रा बड़े हुए तो उन्हें सालेह बिन कैसान की निगरानी में दे दिया गया । सालेह बिन कैसान मदीना के बहुत बड़े आलिम और परहेज़गार बुज़ुर्ग थे । इन्हीं बुज़ुर्ग की निगरानी में उन्होंने तालीम हासिल की । सालेह बिन कैसान तालीम के साथ-साथ दीनी और अख़लाक़ी बातों की देख-भाल भी सख़्ती से करते थे। हर बात पर निगाह रखते और इस्लामी उसूलों का पाबन्द बनाने की हर मुमकिन कोशिश करते थे । इस रास्ते में जो चीज़ रोड़ा बनती नज़र आती, उसे हटा देते ।

एक बार उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) को नमाज़ में देर हो गई । सालेह बिन कैसान ने वजह पूछी, जवाब दिया कि बाल सँवारने में देर हो गई । बोले, "अच्छा ! यह बाल तुम्हारे नज़दीक नमाज़ से बढ़कर हैं ?" यह कहकर अब्दुल अज़ीज़ को भी इस बात की ख़बर दी और उनके बाल मुँडवा दिए ।

ऐसे उस्ताद की निगरानी में उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने क़ुरआन हिफ़्ज़ (ज़बानी याद) किया। मदीने में सहाबा (रज़ि०) की तादाद बहुत कम रह गई थी, मगर उनके शागिर्द बहुत थे। उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उन सबसे हदीसें सुनीं, अरबी ज़बान का पूरा इल्म हासिल किया। इसके साथ ही शेरो शायरी की भी बड़ी अच्छी तालीम पाई। मदीने के आलिमों के साथ रहकर उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने वह मरतबा पाया कि क़ुरआन व हदीस के बड़े-बड़े आलिम उनके इल्मो कमाल का लोहा मान गए। सभी का कहना है कि उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) उस वक़्त के बड़े इमाम, बड़े फ़क़ीह, बड़े मुज्तहिद, हदीस के बड़े माहिर और मोतबर हाफ़िज़ और सनद हैं। ख़ुद उनका कहना है कि—

> "मैं मदीने से इल्म हासिल करके निकला तो वहाँ कोई मुझसे बड़ा आलिम न था, लेकिन 'शाम' में आकर सब कुछ भूल गया[1]।"

---

1. यह उस वक़्त का बयान है जब गवर्नरी के कामों में फँस जाने के बाद पढ़ने-पढ़ाने से ताल्लुक़ न रहा।

ख़लीफ़ा होने तक

शादी

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) मदीने ही में थे कि उनके इलम व कमाल की धूम दूर-दूर तक पहुँच गई थी। उनके चचा अब्दुल मलिक ने भी उनकी तारीफ़ सुनी। अब्दुल मलिक अपने बेटों और बेटियों की शादियाँ दीनदार और पढ़े-लिखे लोगों से करने की बड़ी लालसा रखता था। अपने भाई अब्दुल अज़ीज़ की शादी उम्मे आसिम से कराने में उसके इसी कामना का बडा दख़ल था। वह अपने एक बेटे की शादी मशहूर ताबई और फ़क़ीह हज़रत सईद बिन मुसैयिब (रह०) की मशहूर आलिमे दीन बेटी से करना चाहता था, लेकिन बहुत कोशिशों के बावजूद कामयाब न हो सका। उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) तो घर के बच्चे थे। सन् 87 हि० में अपनी बेटी फ़ातिमा की शादी उनके साथ कर दी और ख़नासरा का गवर्नर बना दिया।

मदीने की गवर्नरी

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) गवर्नरी के ओहदे पर बहुत कामयाब रहे। अब्दुल मलिक उनके काम से बहुत ख़ुश रहा। अब्दुल मलिक के बाद वलीद ख़लीफ़ा हुआ। उसने देखा कि मदीने में कोई गवर्नर कामयाब नहीं होता, उसने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) को वहाँ का गवर्नर बनाना चाहा, लेकिन उन्होंने मदीने की गवर्नरी क़बूल करने के लिए यह शर्त रखी कि "मैं पिछले गवर्नरों की तरह ज़ुल्म व अत्याचार नहीं करूँगा। चाहे मदीने से एक कौड़ी भी वसूल न हो।" वलीद उनकी क़ाबिलियत को समझता था। उसने शर्त मंज़ूर कर ली और उन्हें रबीउल अव्वल, 87 हिजरी में मदीने का गवर्नर मुक़र्रर कर दिया।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) मदीने के लिए रवाना हो गए। वहाँ जिस वक़्त उनका सामान पहुँचा उस वक़्त उनके बचपन के कुछ साथी और मदरसे के दोस्त मौजूद थे। उन दोस्तों का ख़याल था कि अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) और सालेह बिन कैसान से तरबियत पाया हुआ शख़्स अबू हुरैरा (रज़ि०) और मुसअब बिन उमैर (रज़ि०) की ज़िंदगियों का नमूना और अपने परनाना हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) की मिसाल होगा। लेकिन जब तीस ऊँटों पर सिर्फ़ उनका

अपना सामान देखा तो वे दंग रह गए और पुकार उठे— "इल्म हुकूमत के नीचे दब गया ।"

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) का सामान उनके दादा मरवान के महल में उतारा गया । ज़ुहर की नमाज़ पढ़कर उन्होंने मदीने के दस बुज़ुर्गों को बुलाया । उनके सामने एक तक़रीर (speach) की और उन्हें क़सम दिलाई कि अगर किसी को किसी पर ज़ुल्म करते देखें या सुनें तो उन्हें ख़बर करें । मदीनेवालों को इस तक़रीर और मुलाक़ात का हाल मालूम हुआ तो सभी ने उनके लिए भलाई की दुआ की और पुराने साथियों और दोस्तों ने कहा कि ख़ानदाने ख़िलाफ़त के ताल्लुक़ ने यह ज़ाहिरी शानो शौकत तो ज़रूर पैदा की, लेकिन मालूम होता है कि रूह उसी फ़ज़्लो कमाल से तरोताज़ा है, जो किसी वक़्त मदीने के बुज़ुर्गों से हासिल किया था ।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने मदीने में भी बड़ी कामयाबी से गवर्नरी की । मदीनेवालों पर ख़िलाफ़त की तरफ़ से जो ज़ुल्म होता चला आ रहा था, वह लगभग ख़त्म हो गया । इसके बावजूद रक़म इस क़द्र वसूल होती कि ख़लीफ़ा को उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) से कभी शिकायत नहीं हुई ।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने मदीने में और बहुत-से बड़े काम किए। मस्जिदे नबवी की मरम्मत और तामीर की तरफ़ हज़रत अली (रज़ि०) के बाद से अब तक किसी ने ध्यान नहीं दिया था । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने रबीउल अव्वल सन् 88 हि० से लेकर सन् 90 हि० तक नए सिरे से मस्जिदें बनवाईं । उसमें कुंगुरे और मेहराबें बनवाईं । सीसे के परनाले बनवाए, हौज़ और फ़व्वारा बनवाया । उसके लिए बहुत-से नौकर रखे । इस काम से फ़ुर्सत पाई तो मदीने के क़रीब की दूसरी सारी मस्जिदों की भी मरम्मत और तामीर करवाई ।

वे निहायत कामयाबी और लोकप्रियता के साथ मदीने में गवर्नरी कर रहे थे कि वलीद ने मदीने के एक इज़्ज़तदार और बेगुनाह आदमी को सौ कोड़े लगवाने, जिस्म पर ठंडा पानी छिड़कवाने और क़ैद में रखने का हुक्म भेजा । यह हुक्म पाकर उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) बहुत परेशान हुए । मजबूरन हुक्म की तामील की । लेकिन एक आदमी को जब हाल पूछने भेजा तो पता चला कि वह ज़ुल्म बर्दाश्त न कर पाया और मर गया। यह ख़बर पाकर उनकी यह हालत हुई कि परेशानी में खड़े होते और ज़मीन पर गिर पड़ते और "इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन" पढ़ते । इसके बाद गवर्नरी से इस्तीफ़ा दे दिया । यह बात सन् 93 हि० में पेश आई ।

लीफ़ा से बरताव

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) मदीने की गवर्नरी से इस्तीफ़ा देकर 'शाम' ने गए । ख़लीफ़ा वलीद अपने वक़्त का बड़ा ज़बरदस्त हाकिम था । लेकिन र बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की वह शर्त भी उसे याद थी जो उसने उन्हें ीने का गर्वनर बनाते वक़्त मंज़ूर की थी । चुनांचे उसने उनसे किसी तरह की ख़्ताछ नहीं की । हमेशा इज़्ज़त के साथ पेश आता रहा और हुकूमत के कामों राय और मशविरा लेता रहा । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने कभी क़ के ख़िलाफ़ उसे मशविरा नहीं दिया । वे ख़ुदा से बहुत ज़्यादा डरनेवाले, ुद्दार और ग़ैरतमंद आदमी थे । उमैया ख़ानदान के शहज़ादों और अमीरों से नियावी शान व शौकत में घटकर रहना उन्होंने कभी पसंद नहीं किया और मशविरा देने में चापलूसी से काम लिया । ख़ानदाने ख़िलाफ़त का एक फ़र्द ने से अगर एक तरफ़ अमीरों की तरह ठाठ-बाट में सबसे बढ़ गए, तो फ़ारूक़ी ानदान से ताल्लुक़, अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) की तरबियत और सालेह ब्न कैसान की शागिर्दी के असर की वजह से जो अल्लाह का डर पैदा हुआ सने किसी और से दबने नहीं दिया । बचपन में मदीने के बुज़ुर्गों से जो इल्म ाया था, उसकी चमक अपना रंग दिखाती रहती थी । वलीद और सुलेमान ालाँकि ख़लीफ़ा थे, फिर भी चचेरे भाई थे । उनसे क्या दबते ? अब्दुल मलिक ो चचा था, ख़लीफ़ा था और ससुर भी । उसे भी बड़ी बेख़ौफ़ी और आज़ादी के साथ टोक दिया करते । एक बार ख़लीफ़ा अब्दुल मलिक को एक ख़त के ज़रिए इस तरह ध्यान दिलाया—

> "तुम एक चरवाहे हो और हर चरवाहे से उसके गल्ले के बारे में पूछा जाएगा । अनस बिन मलिक (रज़ि०) ने मुझसे हदीस बयान की है । उन्होंने रसूल (सल्ल०) से सुना है कि ख़ुदाए वाहिद तुम सबको क़ियामत के दिन इकट्ठा करेगा और ख़ुदा से ज़्यादा बात में सच्चा और कौन हो सकता है ?"

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के कहने का मतलब यह था कि एक दिन ना ज़रूर आकर रहेगा कि हर आदमी को उसके किए का फल मिलकर रहेगा । सलिए ऐ ख़लीफ़ा ! नेकी कर और बुराई से रुक जा ! और तुझ पर ख़िलाफ़त ो जो ज़िम्मेदारी डाली गई है उसे तू पूरा कर । ख़ुदा से डर और दीन के मुताबिक़ आया की हिफ़ाज़त कर ! रिआया में से एक आदमी भी अल्लाह की नाफ़रमानी रेगा तो उसके साथ तू भी पकड़ा जाएगा ।

असल में यही आख़िरत और ख़ुदा का ख़ौफ़ था जिससे वे दूसरों को डराते

थे और जो ख़ुद उनके दिल में भी बैठा हुआ था। उसने उन्हें बिलकुल निड
बना दिया था। वलीद एक सख़्त मिज़ाज ख़लीफ़ा था और हज्जाज बिन यूसुफ़
जैसे ज़ालिम और बेरहम हाकिम का सरपरस्त भी। वलीद चाहता था कि सुलैमान
बिन अब्दुल मलिक की बैअत तुड़वा दे[1] और अपनी मरज़ी के मुताबिक़ किसी
और आदमी की बैअत लोगों से ले। उसने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०)
से सुलैमान की बैअत तोड़ने के लिए कहा। उन्होंने साफ़ इनकार कर दिया और
कहा—

"हमनें एक साथ तुम दोनों की बैअत की है; इसलिए यह नहीं हो सकता
कि उसकी बैअत तोड़ दें और तुम्हारी क़ायम रखें।"

वलीद के बाद सुलैमान ख़लीफ़ा हुआ तो उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०)
उसे भी उसकी ग़लतियों की तरफ़ ध्यान दिलाते रहते थे। सुलैमान उनके शान
व शौकत और ज्ञान-वैभव से इस तरह दबा हुआ था कि मानो उसने उनको अपना
वज़ीर(मंत्री) बना लिया था। उसके सामने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने
अपना जो ख़ाका पेश किया वह नीचे लिखे क़िस्सों से साफ़ ज़ाहिर होता है :—

एक बार एक ख़ारिजी ने सुलैमान को बुरा-भला कहा। सुलैमान ने उमर बिन
अब्दुल अज़ीज़ (रह०) से पूछा कि उसके साथ क्या करना चाहिए ? उन्होंने जवाब
दिया आप भी उसे बुरा-भला कह लीजिए।

एक बार उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) और सुलैमान के ग़ुलामों में लड़ाई
हो गई। उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के ग़ुलाम उनपर भारी रहे। यह ख़बर
सुलैमान को हुई। उसने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) से शिकायत की कि
तुम्हारे ग़ुलामों ने हमारे ग़ुलामों को क्यों मारा ? जवाब दिया—"मुझे मालूम नहीं
मैंने तो यह बात आपसे सुनी।" इस जवाब पर सुलैमान ने कहा— "तुम झूठ
कहते हो।"

यह सुनकर उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) बड़े शरमिन्दा हुए। उन्होंने उससे
कहा, "तुम मुझे झूठा कहते हो, हालाँकि जबसे मैंने होश संभाला है, कभी झूठ
नहीं कहा। अमीरुल मोमिनीन ! मेरे ख़ुदा की ज़मीन बहुत फैली हुई है, जो मुझे
आपसे बेपरवाह कर सकती है।" यह कहकर उठ खड़े हुए और मिस्र जाने का
इरादा कर लिया। लेकिन सुलैमान ने उन्हें मनाकर रोक लिया।

---

1. ख़ानदाने उमैया के ख़लीफ़ा अपनी ज़िंदगी में कई-कई आदमियों को नम्बरवार ख़लीफ़ा नामज़द कर जाते थे। यानी पहले यह ख़लीफ़ा हो फिर यह उसके बाद वह। इसी लिए अब्दुल मलिक ने पहले वलीद फिर सुलैमान के लिए लोगों से बैअत ली थी।

एक बार सुलैमान ने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के सामने कहा कि औरतें
ायदाद में हिस्सा नहीं पातीं । उन्हें यह सुनकर ताज्जुब हुआ । बोले, "सुब्हानल्लाह !
रआन मजीद कहाँ है ?" सुलैमान ने ग़ुलाम से कहा, "ख़लीफ़ा अब्दुल मलिक
औरतों के बारे में जो कुछ लिखा है, वह ले आओ।" यह सुनकर उमर बिन
ब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने कहा— "यह आप क़ुरआन मजीद मँगवा रहे हैं ?"
ह बात एक तरह से बड़ी सख़्त थी । सुलैमान का बेटा अय्यूब उस वक़्त मौजूद
। सुनकर तड़प गया । बोला, "अमीरुल मोमिनीन के सामने अगर कोई ऐसी
तें करेगा, तो हो सकता है कि उसकी गर्दन उड़ा दी जाए ।" ख़लीफ़ा के बेटे
ी बात सुनकर उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने जवाब दिया, "अगर तुम
लीफ़ा होगे तो रिआया को इससे भी ज़्यादा सदमा पहुँचेगा"।[1]

सुलैमान ने बेटे को डाँटा, "उमर से इस तरह की बातें करते हो ?"

यह सुनकर उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) फिर बोले— "आप ग़म न करें,
े ख़ूब खरी-खरी सुनाई ।"

एक बार सुलैमान हज को गया, उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) साथ थे ।
ाज़-सामान और लश्कर सभी कुछ साथ था । एक जगह पड़ाव डाला, सामान
सुलैमान की नज़र पड़ी तो घमण्ड के नशे में चूर हो गया । उमर बिन अब्दुल
ज़ीज़ (रह०) के बारे में उसे मालूम था कि शानो शौक़त को पसन्द करते हैं ।
छा— "तुमको ये चीज़ें कैसी नज़र आ रही हैं ?" उन्होंने जवाब ऐसा दिया कि
सका घमण्ड मिट्टी में मिल गया । फ़रमाया, "मालूम होता है कि दुनिया, दुनिया
ो खा रही है । तुमसे इस साज़-सामान के बारे में पूछताछ होगी ।"

एक बार बिजली इस ज़ोर से कड़की कि लोगों के दिल दहल गए । सुलैमान
घबराकर एक लाख दिरहम उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) को दिए कि सदक़ा
ान) कर दें । उन्होंने कहा— "इससे बेहतर एक और काम है ।" सुलैमान ने
छा— "क्या ?" बोले— "तुमने जिन लोगों की जायदादों पर क़ब्ज़ा कर लिया
वह उन्हें वापस कर दो ।"

एक बार सफ़र में सुलैमान के साथ थे । बातों-बातों में सामान व असबाब
आगे निकल गए । मंज़िल पर पहुँचकर घोड़ों से उतरे और अपने सामान की
ह देखने लगे । वहाँ देखा कि जो लोग अपना सामान पहले भेज चुके थे, उनका
मान आ रहा है । यह देखकर रो पड़े । सुलैमान ने रोने की वजह पूछी

---

[1] सुलैमान बिन अब्दुल मलिक ने अपने बाद अय्यूब को वली अहद बनाया था, लेकिन फिर उसके बजाए दूसरे को वली अहद मुक़र्रर किया ।

तो बोले– "इसी तरह क़ियामत के दिन जो आदमी सफ़र का सामान पहले भे
चुका होगा, वह उसको मिल जाएगा और जिसने नहीं भेजा, उसे कुछ नहीं मिलेगा

ख़िलाफ़त

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) जिस तरह दीनी मामलों की तरफ़ ध्यान दिल
रहते थे, उसी तरह दुनियावी कामों में भी उसकी मदद करते रहते और हुकू
के मामलों में भी ख़लीफ़ा को बड़े अच्छे मशविरे देते । उनकी नसीहतों और ख़ैरख़्वा
से सुलैमान बिन अब्दुल मलिक उनसे बेहद मुतास्सिर (प्रभावित) था । इस अ
का नतीजा यह हुआ कि सुलैमान ने अपनी उम्र के आख़िरी हिस्से में ऐसा ब
काम किया जो इस्लाम पर चलनेवालों के लिए बहुत ही अच्छा साबित हुआ
अल्लाह तआला सुलैमान पर रहमतें नाज़िल फ़रमाए । वह मरने से पहले अ
बेटे को ख़लीफ़ा नामज़द न करके उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ को ख़लीफ़ा बन
के लिए वसीयतनामा लिख गया और अपनी ज़िन्दगी ही में बड़ी हिकमत के स
वसीयतनामा दिखाए बग़ैर नामज़द ख़लीफ़ा की बैअत सबसे ले ली ।

सुलैमान की मौत के बाद जब वसियतनामा पढ़ा गया तो उमर बिन अब्
अज़ीज़ (रह०) का नाम निकला । अपना नाम सुनकर उमर बिन अब्दुल अज़
(रह०) ख़िलाफ़त की ज़िम्मेदारियों से काँप गए । उस वक़्त उनके सामने दो आ
थे । एक अपने ख़ानदान के ख़लीफ़ाओं का जिनमें वह अपनी ज़िंदगी बसर
चुके थे । दूसरा अपने परनाना हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) का जिनके ख़ान
में बचपन के दिन गुज़ारे थे और जहाँ रहकर अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) अ
सालेह बिन कैसान जैसे आलिमे बाअमल से तालीम और तरबियत पाई थी ।
दोनों में से वह एक ही को अपना सकते थे । चुनांचे एक को अपनाने और दू
को छोड़ने पर "इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन" उनकी ज़बान से निकल
इसके बाद उन्होंने जो कुछ किया, वह आगे पढ़िए ।

तीसरा अध्याय

सुधार

ख़िलाफ़त का सुधार

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) सन् 99 हिजरी में ख़लीफ़ा हुए। इसका मतलब यह है कि वे उस वक़्त ख़लीफ़ा हुए जब इस्लाम को क़ायम हुए सौ साल पूरे होने जा रहे थे। इस सदी में जब तक ख़िलाफ़ते राशिदा[1] का ज़माना रहा, उस वक़्त तक हर छोटे-बड़े की ज़िन्दगी में इस्लाम ही इस्लाम नज़र आ रहा था। मस्जिद से लेकर जंग के मैदान तक इस्लाम का ही बोल-बाला था। लोग घर में भी क़ुरआन व सुन्नत के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करते और बाज़ारों में भी शरीअत के मुताबिक़ लेन-देन करते। लेकिन फिर ज़माना बदल गया। ख़िलाफ़ते राशिदा के बाद ख़ानदाने उमैया के ख़लीफ़ाओं ने उसे अपनी मरज़ी के मुताबिक़ चलाना शुरू किया तो ज़िन्दगी के हर शोबे में घुन लगने लगा। अक़ाएद, अख़लाक़, लेन-देन और सामाजिक ज़िन्दगी ग़रज़ ज़िन्दगी के हर मामले में दरार पड़ने लगी। **"अन्नासु अला दीनि मुलूकिहिम"** (लोग अपने बादशाहों के चलन पर चलते हैं) का एक असर वह था जो ख़ुलफ़ाए राशिदीन के ज़माने में लोगों पर नज़र आता था। इसके ख़िलाफ़ बनी उमैया के ख़ानदान के ज़माने में जो असर रिआया पर पड़ा, नेकियों का फैलाव और बुराइयों पर जो दबाव ख़िलाफ़ते राशिदा के ज़माने में था, अब न रहा। यह कहना चाहिए कि इस्लाम की जो असल ग़रज़ थी लोग उसे भूलने लगे थे।

ऐसी हालत में ख़िलाफ़त का बोझ उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के कंधों पर पड़ा। हालाँकि उनकी ज़िन्दगी शाहज़ादों से भी बढ़-चढ़कर थी, लेकिन वे जानते थे कि ख़िलाफ़त की मौत से इस्लाम की मौत और ख़िलाफ़त की ज़िन्दगी से इस्लाम की ज़िन्दगी है। फिर अपनी पैदाइश से लेकर तालीम व तरबियत से फ़ारिग़ होने तक अपने परनाना हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) के घराने के साथ रहे। अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) जैसे बुज़ुर्गों की ज़िन्दगियों को देखा था और सालेह बिन कैसान जैसे बुज़ुर्गों की निगरानी में तालीम हासिल की थी। हालाँकि यह असर गवर्नरी के ज़माने में हुकूमत की चमक-दमक में दब गया था, लेकिन

---

1. यानी हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़, हज़रत उमर फ़ारूक़, हज़रत उसमान ग़नी और हज़रत अली रिज़्वानुल्लाहि अलैहिम अज्मईन की ख़िलाफ़त का ज़माना।

जब ख़ुद ख़लीफ़ा हुए तो वह असर अपना रंग लाया और उन्होंने ख़लीफ़ा हो ही वह कुछ करना शुरू कर दिया जिससे मालूम होता है कि जैसे यह मामल उनका सोचा-समझा मामला था । उन्होंने फ़ौरन सुधार की तरफ़ क़दम बढ़ा दिए मुख़ालफ़तों और रुकावटों के बावजूद उनके क़दम आगे बढ़ते गए ।

ख़ानदाने उमैया ने ख़िलाफ़त को बादशाहत की शक्ल में बदलकर रख दिय था और वे उसे अपनी जायदाद समझते थे । इसी लिए जो ख़लीफ़ा होता व अपने घर के आदमी ही को ख़लीफ़ा नामज़द कर जाता। उमर बिन अब्दुल अज़ी (रह०) ख़लीफ़ा होने के लिए तीन तरीक़ों को जाएज़ समझते थे—

(1) तमाम मुसलमान किसी को अपना ख़लीफ़ा चुन लें जैसे हज़रत अबू बक़ सिद्दीक़ (रज़ि०) को मुसलमानों ने अपना ख़लीफ़ा चुन लिया था ।

(2) मुसलमानों का बनाया हुआ ख़लीफ़ा किसी ऐसे आदमी को ख़लीफ़ा नामज़ कर जाए, जो उसके ख़ानदान से न हो । जैसे हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि० ने हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) को ख़लीफ़ा नामज़द किया था ।

(3) मुसलमानों का ख़लीफ़ा कुछ ऐसे लोगों को नामज़द कर दे, जो उसव ख़ानदान से न हों और मुसलमानों को वसीयत कर जाए कि उनमें से किसी ए को ख़लीफ़ा चुन लें । जैसे हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) ने छः सहाबा (रज़ि० को ख़लीफ़ा बनाने के लिए नामज़द कर दिया था ।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने सबसे पहले ख़िलाफ़त की उसी बिग शक्ल को सुधारा जो ख़ानदाने बनी उमैया ने बना रखी थी । उसी दिन मस्जि में तमाम मुसलमानों को इकट्ठा किया । मिम्बर पर खड़े होकर यह ख़ुतबा दिया—

> "लोगो ! मुझ पर ख़िलाफ़त का बोझ मुझसे राय लिए बग़ैर डाल दिया गया । मुझको ख़लीफ़ा बनाने के लिए आम मुसलमानों से भी राय नहीं ली गई । इसलिए मैं अपनी बैअत का तौक़ तुम्हारी गर्दन से निकाले लेता हूँ, अब तुम जिसको चाहो पसन्द करो और ख़लीफ़ा बना लो ।"

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के इस इस्तीफ़े पर एक हंगामा ख हो गया । मुसलमानों ने ऊँची आवाज़ से कहना शुरू किया– "हम आपकी ख़िलाफ़ पर राज़ी हैं और हमने आपको अपना ख़लीफ़ा चुना ।"

यह हंगामा ख़त्म हुआ तो आपने तक़रीर की । लोगों को अल्लाह की नाफ़रमा से डराया, आख़िरत की पूछताछ की याद दिलाई और मौत को याद रखने व तलक़ीन की । आख़िर में पूरी ताक़त से आवाज़ ऊँची करके कहा—

> "लोगो ! जो शख़्स अल्लाह का हुक्म पूरा करे, उसकी इताअत तुम

पर ज़रूरी है। जो शख़्स ख़ुदा का हुक्म न माने उसका हुक्म मानना तुम्हारे लिए जाएज़ नहीं । जब तक मैं ख़ुदा के हुक्मों पर चलूँ तुम मेरे हुक्मों पर चलो । जिस दिन मैं अल्लाह की नाफ़रमानी करूँ, उस दिन मेरा हुक्म मानना तुम पर वाजिब नहीं ।"

इस तक़रीर के बाद हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) घर को चले तो ाही सवारियाँ ख़च्चर और तुर्की घोड़े आदि पेश किए गए, लेकिन उन्होंने उन्हें ्तुलमाल में दाख़िल कर दिया और कहा कि मेरा ख़च्चर काफ़ी है । पुलिस कप्तान ाला लेकर आगे-आगे चला तो उसे हटा दिया और कहा कि मैं भी तमाम मुसलमानों ी तरह एक मुसलमान हूँ । फिर जब उनके लिए शाही ख़ेमे लगाए गए और ाही फ़र्श बिछाया गया, तो यह सब सामान भी बैतुलमाल में भिजवा दिया और क चटाई पर बैठ गए और पहला हुक्म यह दिया— "तमाम सामान बैतुलमाल दाख़िल कर दिया जाए ।"

यह सब करके घर आए तो बेहद फ़िक्रमन्द थे । बांदी ने हाल पूछा तो रमाया–"आज दुनिया में कोई मुसलमान ऐसा नहीं है, जिसका मुझ पर हक़ न ो । मुझसे पूछे और कहे बिना उसका अदा करना मुझ पर फ़र्ज़ कर दिया गया ।"

यह कहकर खाना खाया और लेट गए । इतने में उनके बेटे अब्दुल मलिक ो बड़े परहेज़गार और अल्लाह से डरनेवाले और हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि०) की ज़िन्दगी का नमूना थे, आए और सलाम करके बोले—

"अब्बाजान ! जो माल हमने (उमैया ख़ानदान ने) लोगों से छीना है उसकी ापसी से पहले आप सोना चाहते हैं ?"

जवाब दिया– "नमाज़े ज़ुहर के बाद यही काम करूँगा ।"

अब्दुल मलिक ने फिर कहा, "इसकी क्या गारंटी है कि आप ज़ुहर तक ज़िंदा हेंगे ।" बेटे से यह सुना तो झट उठ बैठे । बेटे को गले लगाकर कहा– "ख़ुदा ा शुक्र है कि उसने मुझे ऐसी औलाद दी जो मुझको दीन के कामों में मदद देती ।"

इसके बाद घर से निकले और एलान कर दिया कि जिसका माल छीना गया ो, वह आकर वापस ले ले। एलान के साथ ही आप मस्जिद में जा बैठे और बसे पहले अपने ग़ुलाम हज़रत मुज़ाहिम से कहा, "हमारी जायदाद के काग़ज़ात ाओ और बताओ कि हमारी जायदाद में ऐसा कौना-सा माल है ?" मुज़ाहिम काग़ज़ात पढ़ने और सुनाने शुरू किए । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) क़ैंची

से ऐसे काग़ज़ात कतर-कतर कर ढेर करने लगे । आख़िर में एक अँगूठी का नगीन रह गया । यह वलीद ने उनको दिया था उसे भी बैतुलमाल में जमा करने क हुक्म दिया, तो मुज़ाहिम रो पड़े और अर्ज़ किया— "औलाद के लिए खाने-पी का क्या बनेगा ?" फ़रमाया, "सबको ख़ुदा के हवाले करता हूँ।"[1]

इस सिलसिले का एक अजीबो ग़रीब क़िस्सा है । उनकी बीवी (फ़ातिमा बिन अब्दुल मलिक) की एक बाँदी थी । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ख़लीफ़ा होने से पहले उससे बहुत मुहब्बत करते थे । ख़लीफ़ा हुए तो वह बन-ठनकर मुबारक बाद पेश करने आई । उन्होंने पूछा— "तुम फ़ातिमा की मिल्कियत में किस तरह आईं ?" बोली— "हज्जाज ने कूफ़े के गवर्नर पर जुर्माना लगाया । मैं उस गवर्नर की बाँदी थी । हज्जाज ने जुर्माने के बदले मुझे लेकर ख़लीफ़ा अब्दुल मलिक के पास भेज दिया। मैं उस वक़्त बच्ची थी । अब्दुल मलिक ने मुझे अपनी बेटी फ़ातिमा की मिल्कियत में दे दिया ।" ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने फिर पूछा, "क्या वह गवर्नर ज़िन्दा है ?" बोली, "मर गया, लेकिन उसकी औलाद मौजूद है और औलाद का बुरा हाल है ।" यह सुनते ही गवर्नर की औलाद को बुलाया और बाँदी को उनके हवाले कर दिया । बाँदी चलने लगी तो बोली–"आपका इश्क़ क्या हुआ ?" फ़रमाया, "अब तो वह और बढ़ गया ।"

इससे ज़्यादा दिलचस्प एक और बात है । उनकी बीवी फ़ातिमा के पास एक निहायत क़ीमती मोती था । यह मोती उनके वालिद ख़लीफ़ा अब्दुल मलिक ने दिया था । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने ख़लीफ़ा होते ही उनसे कहा—

"तुमको दो बातों में से एक का इख़्तियार है— "या तो मोती वापस कर दो या मुझसे तलाक़ ले लो ।"

बीवी ने जवाब दिया—

---

1. यहाँ एक घटना का बयान दिलचस्पी से ख़ाली न होगा । वह घटना यह है कि अब्दुर्रहमान बिन क़ासिम बिन मुहम्मद बिन अबी बक्र (रज़ि०) ने ख़लीफ़ा मनसूर को नसीहत करते हुए फ़रमाया कि हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने 11 लड़के और 17 दीनार छोड़े । उनमें से 7 दीनार उनके क़फ़न-दफ़न में ख़र्च हो गए । बाक़ी घरवालों में बँट गए । लड़कों ने 17-17 दिरहम (लगभग साढ़े चार-चार रुपये) पाए । हिश्शाम बिन अब्दुल मलिक भी 11 लड़के छोड़कर मरा । उसके लड़कों ने दस-दस लाख की रक़म पाई । लेकिन मैंने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के एक लड़के को देखा कि उसने एक दिन में सौ घोड़े जिहाद में दिए और हिश्शाम के एक लड़के को देखा उसे लोग ख़ैरात दे रहे थे ।

"मैं आप के लिए एक मोती क्या, ऐसे कई मोती क़ुरबान करने को तैयार हूँ।"

यह कहकर उसने (बीवी ने) उस मोती को आपके हवाले कर दिया। ख़लीफ़ा र बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उसे बैतुलमाल में जमा कर दिया।[1]

इसके बाद सजावट और ठाठ-बाट के सामान की तरफ़ ध्यान दिया। लौण्डी, दी, ग़ुलाम, लिबास, इत्र, अंबर, बोरियों लौंगें जो उनके लिए ख़ुश्बू में पड़ती , घोड़े और अस्तबल का सामान वग़ैरह सबका सब 22 दीनार में बेच डाला र यह सारी रक़म ख़ुदा की राह में लुटा दी, और अब जो उठे तो फ़क़ीर होकर ।[2] अब वह उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) नहीं थे, जो ख़ानदाने बनी उमैया सबसे ज़्यादा ऐशपसंद शहज़ादे थे, बल्कि अब वह उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) ; अबू हुरैरा (रज़ि०) थे , जुनैद (रह०) व शिबली (रह०) और हसन बसरी ह०) थे।

ज़बरदस्ती क़ब्ज़ा की हुई जो जायदाद ख़ानदाने बनी उमैया में जिसके पास थी नकी वापसी का हुक्म दिया। शाही ख़ानदान को जो ग़ैर मामूली वज़ीफ़े और ाए दिन तोहफ़े मिला करते थे वे सब बंद कर दिए। नमाज़ के बाद ख़ुदा के ूल (सल्ल०) की तरह ख़ानदाने उमैया पर दरूद और सलाम भेजा जाता, जनाज़े । नमाज़ में एक ख़ास क़िस्म की चादर उनके लिए बिछाई जाती, अदालतों में ची जगह उन्हें बैठने के लिए मिलती थी, उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने । सब बातों को एकदम ख़त्म कर दिया। गवर्नरों को लिख भेजा कि दरबार किसी को किसी पर बड़ा बनाकर मत बिठाओ, चाहे वह ख़िलाफ़त के ख़ानदान से क्यों न हो, तमाम मुसलमान आपस में बराबर हैं।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के ख़लीफ़ा होने से पहले उमैया के ानदान के बड़े लोगों ने नमाज़ के औक़ात की पाबंदी छोड़ दी थी और ज़कात । वसूली और उसका ख़र्च शरीअत के मुताबिक़ नहीं रह गया था। उमर बिन ब्दुल अज़ीज़ (रह०) ख़लीफ़ा हुए तो नमाज़ के क़ायम करने और ज़कात शरीअत मुताबिक़ वसूल करने और ख़र्च करने के बारे में हुक्म जारी कर दिए।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के बाद जब यज़ीद बिन अब्दुल मलिक ख़लीफ़ा हुआ तो उसने वही मोती फ़ातिमा को देना चाहा, मगर उन्होंने लेने से इनकार कर दिया।

एक ईसाई इतिहासकार ने लिखा है कि हक़ीक़त यह है कि जब उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) बादशाह न थे उस वक़्त सबसे बड़े बादशाह थे, लेकिन जब वह बादशाह हुए तो राहिब (संन्यासी) बन गए।

बैतुलमाल में सुधार

बैतुलमाल तमाम मुसलमानों की मिलकियत होती है, लेकिन ख़ानदाने उमै के ख़लीफ़ाओं ने उसे अपना निजी ख़ज़ाना समझते थे और ज़िस तरह जी चाहत उसके लिए माल वसूल करते और ख़र्च करते। ख़राज (लगान), जिज़िया, टैक अशर (दसवाँ हिस्सा) व ज़कात, मालेग़नीमत का पाँचवाँ हिस्सा और ऐसी तमाम दूसरी आमदनी बैतुलमाल में गड्ड-मड्ड जमा होती। इस आमदनी का हिस अलग से नहीं रखा जाता था और न ख़र्च ही क़ायदे से होता था। बैतुलमा से ख़ानदाने उमैया के लोग सबसे ज़्यादा फ़ायदा उठाते। उन्हें ख़ास वज़ीफ़े नाम पर बड़ी-बड़ी रक़में मिलतीं। ख़लीफ़ा ऐसे शायरों और क़वियों को बैतुलमा से बड़े-बड़े इनाम देते जो उनकी शान में क़सीदे पढ़ते और हद से बढ़कर तारी करते।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने ख़लीफ़ा होते ही बैतुलमाल क आमदनी की अलग-अलग मदों के लिए हिसाब-किताब के अलग-अलग रजिस का इन्तिज़ाम किया। ख़ानदाने उमैया का वज़ीफ़ए-ख़ास और फ़ूज़ूलगो शाय की ओर से बेतवज्जोही बरतकर उनका मुँह बंद कर दिया और बैतुलमाल की आमद और ख़र्च शरीअत के मुताबिक़ कर दिया।

ख़िलाफ़ते बनी उमैया के ख़लीफ़ाओं और गवर्नरों की मनमानी और बेउसूल की वजह से लगान, जिज़िया और टैक्सों की वसूली में रिआया पर ज़ुल्म हो लगे थे। हद यह थी कि नव मुस्लिमों से भी लगान और जिज़िया वसूल किय जाता। ग़ैर मुस्लिम रिआया के त्योहारों पर उनसे नज़राने के तौर पर कुछ रक़ वसूल की जाती। आम रिआया पर तरह-तरह के टैक्स लगा दिए गए थे। रुप ढालने पर टैक्स, चाँदी पिघलाने पर टैक्स, दरख़्वास्तें लिखवाने पर टैक्स, दुकान घर और पनचक्कियों[1] पर टैक्स। यहाँ तक कि शादी-ब्याह पर भी टैक्स लग दिया गया था। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने ये सारे टैक्स बिलकु माफ़ कर दिए। ग़ैर मुस्लिमों से नाजाएज़ टैक्स और नज़राने आदि लेना रोक दिया नव मुस्लिमों से लगान, टैक्स और जिज़िया लेना नाजायज़ है, इसलिए उसे बं कर दिया।

नाजायज़ टैक्सों के माफ़ कर देने और लोगों से ज़बरदस्ती छीनी हुई जायदाद के वापस कर देने से बैतुलमाल एकदम ख़ाली हो गया। गवर्नरों ने लिखा कि ख़ज़ाने में एक पैसा भी बाक़ी न रहा। ख़लीफ़ा ने जवाब दिया कि तुम ख़ुद क

---

1. पानी के बहाव की शक्ति से चलने वाली चक्की

ख़ुश रखो, ख़ुदा तुमको ख़ुश करेगा । और वाक़ई ऐसा ही हुआ, जैसाकि आप आगे पढ़ेंगे ।

जेलख़ाने का सुधार

उमैया ख़ानदान की ख़िलाफ़त के ज़माने में लोगों को शक की बिना पर क़ैद व क़त्ल कर दिया जाने लगा था। जो क़ैदी जेलख़ाने में मर जाता, हुकूमत उसे अपने ख़र्च से दफ़न न करती, बल्कि दूसरे क़ैदी चंदा करके कफ़न-दफ़न करते । ऐसी लाश ग़ुस्ल और नमाज़े जनाज़ा के बग़ैर दफ़न कर दी जाती । क़ैदियों को ख़ुराक और ज़रूरी सामान देने में जेलर बेईमानी करते । क़ैदी मर्द और क़ैदी औरतों को एक साथ रखा जाने लगा था। बीमार क़ैदियों के लिए ख़ास इंतिज़ाम न था । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने ख़लीफ़ा होने पर जेलख़ाने का भी सुधार किया और जो शिकायत सुनी उसे दूर किया । क़ैदियों को शरीअत के मुताबिक़ जो सहूलतें मिलनी चाहिएँ, उन्हें दीं । मिसाल के तौर पर—

किसी क़ैदी मुसलमान को इस तरह बेड़ी न पहनाई जाए कि वह नमाज़ न पढ़ सके ।

रात के वक़्त क़ातिल के सिवा हर क़ैदी की बेड़ी उतार ली जाया करे ।

ख़ुदा से डरनेवाले लोगों को जेलर बनाया और उन्हें हुक्म दिया कि क़ैदियों के वज़ीफ़े मुक़र्रर करें और वज़ीफ़े उनके हाथों में हर माह दे दिया करें ।

क़ैदियों को सर्दियों में गरम कपड़े दिए जाएँ और औरतों को बुर्क़ा भी ।

क़ैदी मर्द और क़ैदी औरत अलग-अलग रखे जाएँ ।

किसी को शक की बिना पर क़ैद या क़त्ल न किया जाए ।

क़ैदियों के मर जाने पर उनका कफ़न-दफ़न हुकूमत की तरफ़ से हो और उनकी नमाज़े जनाज़ा भी पढ़ी जाए ।

क़ैदियों को बेड़ियाँ हिलाते हुए बाहर न निकाला जाए ।

लोगों को इस बात पर उभारा कि वे क़ैदियों को सदक़ा और ख़ैरात दिया करें ।

दूसरे सुधार

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने जो दूसरे सुधार किए उनकी सूची बहुत लम्बी है । उनके ख़लीफ़ा होने से पहले लोग तसवीरों, बेकार के खेलों, तमाशों, रागों और बाजों की तरफ़ मुतवज्जोह हो गए थे । बहुत-सी औरतें अपने घर की

मैयतों पर नंगे सिर और बाल खोले, बैन(विलाप) करते हुए निकलने लगी थीं। उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने यह सब बन्द करने का हुक्म दिया। लोग तरह-तरह के बहानों की आड़ ले-लेकर शराब पीने लगे थे। उन्होंने आदेश दिया कि शराब की दुकानें बन्द कर दी जाएँ और कहीं बाहर से शराब बिलकुल न आने पाए। इस्लामी हुकूमत दूर-दूर तक फैल चुकी थी जिसमें ईरान भी शामिल था। ईरानियों के साथ मेल-जोल से मुसलमानो में बेशर्मी और बेहयाई बढ़ने लगी थी। हम्मामों में मर्द और औरतें बड़ी बेबाकी के साथ जा-जाकर नहाने लगे थे। उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने औरतों को हम्मामों में जाने से रोक दिया। और मर्दों को हुक्म दिया कि वे लुंगी बाँधकर नहाएँ।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के ख़लीफ़ा होने के वक़्त कुछ फ़ौजें मुहिमों पर थीं। वे खाने-पीने की चीज़ों की कमी की वजह से परेशान थीं। आपने उनके लिए खाने-पीने की चीज़ों का इंतिज़ाम किया और ग़ैर ज़रूरी फ़ौजों को वापस बुला लिया। हर मुहिम पर हुक्म भेजा कि जब तक फ़ौज साज़ो सामान और अस्त्र-शस्त्र से लैस न हो कदापि आगे न बढ़े और इस्लाम की दावत पेश करने से पहले इस्लामी फ़ौज दुश्मन फ़ौजों पर हमला न करे। इस तरह उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) को जहाँ-जहाँ जो ऐब नज़र आया उसे आपने दूर किया। यहाँ तक कि ज़ालिम गवर्नरों को उनके ओहदों से हटा दिया। हालाँकि ऐसे लोग ज़्यादातर उनके अपने ही ख़ानदान (ख़ानदाने बनी उमैया) के थे। उनकी जगह ख़ुदा से डरनेवाले परहेज़गार लोगों को मुक़र्रर किया और उन्हें बड़ी-बड़ी तनख़्वाहें दीं, ताकि वे रोज़ी-रोटी की फ़िक्र से आज़ाद होकर अपना काम करें। ओहदों की चाहत रखनेवालों को कभी कोई ओहदा नहीं दिया। हज्जाज बिन यूसुफ़ ख़ानदाने उमैया के गवर्नरों में सबसे बढ़कर ख़लीफ़ाओं का वफ़ादार था और उसकी वजह से हुकूमत को भी बड़ी तरक़्क़ी हासिल हुई थी। लेकिन वह एक निहायत ज़ालिम हाकिम था। उसका असर उसके ख़ानदानवालों पर भी पड़ा था। इसलिए उसके ख़ानदानवालों और उसके मुलाज़िमों को भी उनके ओहदों से हटा दिया और उसके ख़ानदान को यमन की तरफ़ देश निकाला करके गवर्नर को हुक्म दिया कि इस ज़ालिम के ख़ानदान को बिखेर कर दो ; ये लोग एक जगह रहकर फ़साद से बाज़ नहीं आ सकते।

समाज का सुधार

समाज का सुधार चार बातों के सुधार पर निर्भर है। इन चारों का सुधार एक साथ करना ज़रूरी है। जिस समाज में इन चारों चीज़ों का एक साथ सुधार नहीं

हो पाता, उसके सुधार में कमी रहती है और यह कमी समाज की तरक़्क़ी में एक बड़ी रुकावट बनती है। मुसलमानों के ख़लीफ़ा पर वाजिब है कि इन सब पर नज़र रखे। उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने समाज के सुधार के लिए जिस तरह इन चारों बातों की तरफ़ ध्यान दिया। उसकी एक झांकी नीचे दी जा रही है—

सोच में सुधार

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) जानते थे कि जब तक लोगों के ज़हन इस्लामी सांचों में नहीं ढलेंगे, उस वक़्त तक किसी डर और लालच की बिना पर लोग बुराई से बच जाएँ तो बच जाएँ, लेकिन डर और लालच के बग़ैर वे शैतान के फंदों से बच नहीं सकते। इसलिए ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने रिआया के ज़ेहनों को सँवारना अपनी ख़िलाफ़त का सबसे बड़ा मक़सद समझा। इस मक़सद को पूरा करने के लिए उन्होंने जो हुक्म जारी किया वह यह है—

> "ईमान कुछ फ़र्ज़ों, कुछ हुक्मों कुछ हदों[1] और सुनन[2] का नाम है। जिसने इन बातों को पूरा कर लिया उसने अपना ईमान पूरा कर लिया और जिसने इनको पूरा न किया उसने ईमान को पूरा नहीं किया। अगर मैं ज़िंदा रहा तो इन सारी बातों को तुम्हारे सामने बयान करूँगा, ताकि तुम उनपर अमल करो और अगर मर गया तो तुम्हारे सामने मुझे रहने की चाहत भी नहीं।"

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की ख़िलाफ़त से पहले लोग क़ुरआन के खुले और साफ़ हुक्मों को बयान करने के बदले उसके 'मुतशाबिहात' यानी ऐसी बातों की खोज में लग गए थे जिनका सही और पूरा-पूरा इल्म ख़ुदा के सिवा किसी को नहीं। जैसे अर्श क्या है ? कुर्सी क्या है ? तक़दीर की हक़ीक़त, इसराफ़ील (अलै०) की बनावट वग़ैरह। बड़े-बड़े आलिम अपनी अक़्ल की क़ुव्वतें ऐसी ही ग़ैब की बातों पर ख़र्च कर रहे थे। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उनको बुलाया, उनसे मुनाज़िरा (शास्त्रार्थ) किया, उन्हें समझाया और कहा कि स्कूल के बच्चों और बद्दुओं का दीन[3] अपनाओ और इसके सिवा हर चीज़ को भूल जाओ।

अकसर कहा करते कि— 'जब कोई क़ौम 'मोहकमात[4]' को छोड़कर 'मुतशाबिहात'

---

1. जुर्मों और गुनाहों को रोकने के लिए सज़ाएँ मुक़र्रर करना।
2. वे काम जिन्हें बार-बार किया जाए।
3. अमल करने लायक़ वही बातें जिनका ज़िक्र क़ुरआन में है। यानी फ़र्ज़, अहकाम, हदें और सुन्नतें।
4. क़ुरआन की वे आयतें जिनका मतलब साफ़ और ख़ुला हो और जिनके एक ही मानी निकल सकें।

बयान करने लगती है, तो समझो कि वह गुमराही की बुनियाद डाल रही है ।

जिस तरह आजकल अख़बार और रिसाले (Magazine) लोगों के ख़यालात और ज़हन के बनाने में काफ़ी हिस्सा लेते हैं, उसी तरह उस वक़्त लोगों का ज़ेहन बनानेवाले और ख़यालात फैलानेवाले वे उलमा थे जिनको हदीस का इल्म था और जो समझते थे कि क़ुरआन और हदीस की बातों पर किस तरह अमल किया जाए । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने ऐसे आलिमों को जगह-जगह मुक़र्रर किया और उन्हें ताकीद कर दी कि दीन की बुनियादी और ज़रूरी बातें लोगों के ज़ेहनों में अच्छी तरह से बिठाएँ। उस वक़्त के एक बड़े आलिम इमाम मकहूल को हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने टोका और फ़रमाया—

> "आम लोगों के सामने तक़दीर का मसला हरगिज़ न छेड़ो और वह न कहो जो ग़ीलान और उसके पैरवी करनेवाले कहते हैं ।"

ग़ीलान एक आलिम था , उसे तक़दीर के मसले का भेद और राज़ जानने में बड़ी दिलचस्पी थी । वह जहाँ बैठता वहीं तक़दीर का मसला छेड़ देता। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उसे बुलाया, उसे ऐसी बातें करने से तोबा कराई और उसकी फैलाई हुई बातों को मिटाने के लिए आलिमों को फैला दिया । इन आलिमों के लिए हुक्म था कि हर तीसरे दिन तक़रीरें किया करें ।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने एक बहुत बड़ा काम और किया । क़ुरआने करीम के बाद इस्लाम के हुक्मों, इस्लाम की तालीम और इस्लाम के अख़लाक़ हदीसों में बयान किए गए हैं । उनके ज़माने में हदीसें ताबईन[1] के सीनों और ज़बानों पर थीं, उनमें कोई किताब तरतीब नही पाई थी। ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ख़ुद बहुत बड़े ताबई और आलिम थे । जब उन्होंने देखा कि ऐसे लोग दिन-प्रति-दिन कम होते जा रहे हैं, इस अन्देशे ने उनको हदीसें जमा करने कि तरफ़ मुतवज्जोह किया। उन्होंने गवर्नरों को लिखा—

> "नबी करीम (सल्ल०) की हदीसों की तलाश करो, उनको इकट्ठा करो । मुझको इल्म के मिटने और आलिमों के फ़ना हो जाने का डर है, और (सुनो!) सिर्फ़ अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की ही हदीस क़बूल की जाए ।"

सूबों के गवर्नरों ने बड़ी मेहनत के साथ इस हुक्म को पूरा किया । जो हदीस जहाँ मिल सकी लिखवाकर ख़लीफ़ा की ख़िदमत में रवाना कर दी । ख़लीफ़ा के यहाँ से उनके मजमूए बना-बनाकर पूरे मुल्क में फैला दिए गए । उस वक़्त

1. वे लोग जिन्होंने सहाबा (रज़ि०) को देखा और उनसे दीन सीखा ।

के एक बहुत बड़े आलिम साद बिन इबराहीम कहते हैं—

> "हमको उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने हदीसों के जमा करने का हुक्म दिया और हमनें ग्रन्थ के ग्रन्थ हदीसें लिखीं और उन्होंने उनकी एक-एक जिल्द जहाँ-जहाँ उनकी हुकूमत थी, वहाँ भेजवा दी ।"

इल्म का प्रचार

समाज के सुधार के लिए दीन के आलिमों की नसीहतों, तक़रीरों और किताबों के बाद ज़रूरी है कि दीन का इल्म स्कूलों व मदरसों के ज़रिए घर-घर पहुँचा दिया जाए । चुनांचे हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने जगह-जगह हुक्म भेजा कि :–

● क़ुरआन और हदीस के दर्स के लिए सभाएँ की जाएँ और आम लोगों को उनमें बुलाया जाए ।

● उलेमा मस्जिदों में बाक़ायदा लोगों को दीनी तालीम (धार्मिक शिक्षा) दें ।

● जो लोग अपना पूरा वक़्त लोगों को दीनी तालीम देने के लिए दें उन्हें बैतुलमाल (सरकारी ख़ज़ाने) से हर महीने सौ दीनार दिए जाएँ ।

● ऐसे आलिमों को रोज़गार की फ़िक्र से बिलकुल आज़ाद कर दिया जाए और उनकी हर ज़रूरत को पूरा किया जाए ।

● दीन का इल्म सीखनेवालों को वज़ीफ़े दिए जाएँ ।

इन हुक्मों पर ख़लीफ़ा ने ख़ुद भी बड़ी सख़्ती से अमल किया और गवर्नरों से भी कराया । अल्लाह तआला ने ख़लीफ़ा को बड़ी तौफ़ीक़ दी थी । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उलेमा की तरबियत (Training) का भी इन्तिज़ाम किया । अल्लाह के फ़ज़ल से उस वक़्त अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) के ग़ुलाम और बेहतरीन शागिर्द हज़रत नाफ़े (रह०) ज़िन्दा थे । उन्हें इस काम पर लगाया और इस काम के लिए मिस्र आदि रवाना किया ।

सहाबा (रज़ि०) की सीरत और उनके जिहाद के हालात तरतीब देने की तरफ़ अभी तक किसी ख़लीफ़ा ने तवज्जोह नहीं की थी । ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने इस काम के लिए उस वक़्त के सबसे बड़े आलिम हज़रत आसिम बिन उमर क़तादा (रह०) को दमिश्क़ की जामा मस्जिद में बिठाया कि वे बाक़ायदा लोगों को सहाबा (रज़ि०) के हालात सुनाएँ । इसके अलावा कुछ ऐसी किताबों से भी मुसलमान आलिमों को फ़ायदा उठाने का मौक़ा दिया, जो ग़ैर मुस्लिमों ख़ास तौर से यूनानियों ने लिखी थीं और वे मुसलमानों के लिए फ़ायदेमंद हो सकती थीं ।

अच्छे लोगों का साथ

तरबीयत और इसलाह (सुधार) के लिए नेक लोगों के साथ उठना-बैठना भी बेहद फ़ायदेमन्द होता है और फिर नेक लोगों का अमल और नमूना भी एक अच्छी तक़रीर व किताब से बढ़कर होता है और उसका असर तक़रीर और किताब से बहुत ज़्यादा लोगों के दिलों पर पड़ता है । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) भी अपने पास ऐसे नेक लोगों को इकट्ठा रखते, ख़ुद उनकी ख़िदमत में जाते और दूसरे लोगों को भी अल्लाह के नेक बंदों की सोहबत में बैठने के लिए उभारते ।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) जब ख़लीफ़ा हुए तो क़ानून के मुताबिक़ शायरों ने उनकी शान में क़सीदे लिखे, उनको आकर सुनाया और इनाम चाहा तो आपने फ़रमाया कि अल्लाह के बजट में कोई ऐसी मद नहीं कि फ़ुज़ूलगो शायरों (बेकार की शायरी करनेवालों) को ईनाम देने की गुंजाइश निकल सके ।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ख़लीफ़ा होने से पहले ख़ुद रंगीन मिज़ाज के थे और उनके दोस्त-यार भी वैसे ही थे। जब वे ख़लीफ़ा हुए तो उस ज़माने के वे यार-दोस्त दिल में बड़ी-बड़ी उम्मीदें लेकर आए । लेकिन अब उन्हें पूछा तक न गया और कहलवा दिया गया कि जिस तरह हमने रंगीन कपड़े छोड़ दिए उसी तरह रंगीन मिज़ाज यार-दोस्तों को भी छोड़ दिया ।

शायरों के बदले हज़रत मैमून बिन मेहरान (रह०), हज़रत रज़ा बिन हैवा (रह०), हज़रत रबाह बिन उबैदा (रह०) जैसे आलिम बाअमल लोगों को बुलाते । उनको आज़ादी के साथ नसीहत करने की इजाज़त देते और उनसे तमन्ना करते कि—

- इनसाफ़ करने में मेरी रहनुमाई करें ।
- नेकी के कामों में मदद दें ।
- ज़रूरतमंदों की ज़रूरतें मुझ तक पहुँचाएँ ।
- मेरे सामने किसी की बुराई न करें ।
- अमानतें अदा करें ।

जो बुज़ुर्ग दूर जगहों पर रहते उनको सलाम कहलवा भेजते । उनको ख़त लिखते और नसीहतें चाहते । बसरा के एक हाकिम ने ख़लीफ़ा से कुछ हिदायतें माँगी। हुक्म हुआ— हसन बसरी (रह०) से हिदायतें लो । उनसे मशविरा लेना काफ़ी है ।

हज़रत सईद बिन मुसैयिब (रज़ि०) अल्लाह से डरनेवाले, निहायत परहेज़गार और अल्लाह पर भरोसा करनेवाले बुज़ुर्ग थे, उनसे अकसर मशविरा लेते । एक बार एक आदमी को भेजा कि फ़लाँ बात पूछकर आए । वह जाकर उनको बुला

लाया । ख़लीफ़ा ने हज़रत सईद बिन मुसैयिब (रज़ि०) को आते देखा, तो बढ़कर माफ़ी चाही कि आदमी भूल से आपको बुला लाया ।

अल्लामा बसर बिन सईद (रह०) का इन्तिक़ाल हुआ तो उन्होंने कफ़न का सामान भी न छोड़ा । उसी ज़माने में अब्दुल मलिक के एक बेटे का इन्तिक़ाल हुआ, तो उसने लाखों की रक़म छोड़ी । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) को दोनों की मौत का हाल मालूम हुआ तो वे अल्लामा बसर बिन सईद (रह०) की तारीफ़ और उनके लिए दुआ की । इस पर अब्दुल मलिक के एक दूसरे बेटे ने शिकायत की तो कहा—

"यह नहीं हो सकता कि हम नेक लोगों का ज़िक्र न करें ।"

इस तरह बुज़ुर्गों की इज़्ज़त करते और दूसरों से कहते कि उनके पास बैठा करें।

एक मज़े की बात

एक बार कुछ शायर दरबार में आए । उन्होंने ख़लीफ़ा की तारीफ़ में कुछ क़सीदे पढ़े, लेकिन ख़लीफ़ा ने उन्हें कुछ इनाम नहीं दिया। शायरों ने लोगों से वजह मालूम की तो बड़े परेशान हुए । सभी ने मिलकर दरख़्वास्त दी कि हम मुसाफ़िर भी हैं । यह दरख़्वास्त पाकर उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) मुस्करा दिए और हर एक को पचास-पचास दीनार दिलवा दिया ।

ख़िलाफ़त को दुबारा ज़िन्दा करना

बड़े-बड़े ख़तीब (नसीहत करनेवाले) नसीहतें और तक़रीरें करें; उलेमा अच्छी-अच्छी किताबें लिखकर ढेर लगा दें और दीन के बुज़ुर्ग अपनी सुहबतों के हल्क़े भी क़ायम करें । लेकिन अगर ख़लीफ़ा इस मिज़ाज का न हो तो माहौल सँवरता नहीं। अपने तौर पर कहीं-कहीं कोई आदमी नेक तो हो सकता है, लेकिन समाज और माहौल बिगड़ता ही चला जाता है । हम ऊपर— "अन-नासु अला दीने मुलूकिहिम"(जैसा राजा वैसी प्रजा) के बारे में लिख चुके हैं । इससे मालूम होता है कि अगर सालेह और नेक लोगों का सत्ता पर अधिकार नहीं होता तो वह असर नहीं पड़ता, जो अपेक्षित है और जो समाज के लिए सामूहिक रूप से फ़ायदेमंद होता है । लेकिन अगर ख़लीफ़ा ख़ुद अल्लाह से डरनेवाला हो और दरबारे ख़िलाफ़त से ऐसे हुक्म जारी किए जाएँ, तो पूरा समाज संवर जाता है । इसी लिए अगर नेक और सालेह लोगों की खिलाफ़त क़ायम हो तो उसे बरक़रार रखने की कोशिश करना चाहिए और ख़िलाफ़त मुर्दा हो रही हो तो उसे ज़िन्दा करना चाहिए । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने इस सिलसिले में जो

कुछ भी किया उसका मुख़्तसर हाल शुरू में लिखा जा चुका है । अब एक बात और उन्हें बेचैन रखती थी । वे चाहते थे कोई रास्ता ऐसा निकल आए कि ख़िलाफ़त को ख़ानदाने उमैया के क़ब्ज़े से निकालकर मुसलमानों के हाथ में दे दें । वे अपनी इस बेचैनी का इज़हार कभी-कभी ज़बान से भी कर देते थे । चुनाँचे एक बार एक गवर्नर को कुछ हिदायतें लिख भेजीं, तो उनमें यह भी लिखा हुआ मौजूद था कि "मेरी राय है ख़िलाफ़त को नुबूवत और ख़िलाफ़ते राशिदा के ज़माने की तरफ़ वापस लाऊँ ।"

एक बार अपने ननिहाली रिश्तेदार हज़रत सालिम बिन अब्दुल्लाह (रह०) को ख़त लिखा । इस ख़त में लिखा था—

> "मैं चाहता हूँ कि अपनी रिआया के मामले में हज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) का तरीक़ा अपनाऊँ, अगर यह ख़ुदा को मंज़ूर हो और मुझमें इतनी क़ुदरत हो । आप मेरे पास हज़रत उमर (रज़ि०) की तहरीरें और उनके फ़ैसले भेजिए जो उन्होंने मुसलमानों और ज़िम्मियों के लिए किए थे । अगर अल्लाह ने चाहा तो मैं वैसा ही करूँगा जैसा उन्होंने किया ।"

एक बार जब उनके ख़ानदानवालों ने कुछ रिआयतें चाहीं और उनपर इसरार किया तो कह दिया कि अगर तुमने इस तरह की बातें फिर कीं और मेरे आस-पास इकट्ठे हुए तो मैं मदीना चला जाऊँगा और ख़िलाफ़त को तमाम मुसलमानों के हवाले कर दूँगा । और इस वक़्त जो आदमी ख़िलाफ़त के क़ाबिल है, वह मेरी नज़र में है और उसका नाम मुझे मालूम है । यानी क़ासिम बिन मुहम्मद बिन अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०)।

ख़लीफ़ा का अपना किरदार

इबादत

दिन में ख़िलाफ़त के कामों से जो वक़्त मिलता उसे ख़ुदा की याद में गुज़ारते। रातों को पिछले पहर ख़ास तौर पर अल्लाह की इबादत में लगे रहते। इसके लिए एक कमरा अलग किया हुआ था। उस कमरे में एक बक्स था जिसमें कम्बल के सिले हुए कपड़े थे। वे कपड़े पहन लेते और सुबह तक ख़ुदा की याद में लगे रहते। सुबह को वे कपड़े उतारकर बक्स में रख देते। फ़ज्र की नमाज़ के बाद कुछ देर के लिए फिर उसी कमरे में जाते। उस कमरे में आपके सिवा कोई आदमी नहीं ज़ा सकता था।

मज़े की बात

मरने से पहले आपने संदूक़ अपने ग़ुलाम को दे दिया था और उसे वसीयत की थी कि इसे दरिया में बहा दे। लेकिन ख़ानदाने उमैया को पता लग गया और उन्होंने ग़ुलाम से माल और दौलत के लालच में आकर संदूक़ को छीन लिया। और जब उन्होंने सन्दूक़ को खोला तो उसमें वही कम्बल के कपड़े मिले।

नमाज़

पाँचों वक़्त की नमाज़ पाबंदी से अदा करते। अज़ान देनेवाले को अगर अज़ान देने में देर हो जाती तो उसे कहलवा देते कि अज़ान का वक़्त हो गया है। अज़ान के साथ ही काम छोड़ देते और मस्जिद जा पहुँचते। जुमा का बड़ा एहतिराम करते। जुमा और दोनों ईदों की नमाज़ के लिए पैदल जाते और दूसरों को भी यही हुक्म देते। नमाज़ में बिलकुल रसूल (सल्ल०) की पैरवी करते। हज़रत अनस बिन मलिक (रज़ि०) उनको नमाज़ पढ़ते देखते तो कहते कि मैंने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) से बढ़कर किसी को रसूल (सल्ल०) के जैसा नमाज़ पढ़ते नहीं देखा।

ज़कात

ख़िलाफ़त से पहले जो माल था वह तो सब ख़ुदा की राह में दे दिया था, या बैतुलमाल में जमा कर दिया था । लेकिन फिर भी रक़म जमा हो जाती तो ज़कात अवश्य अदा करते थे ।

रोज़ा

हर सोमवार और जुमेरात को रोज़ा रखते थे ।

तिलावते क़ुरआन

सुबह सबेरे पाबंदी के साथ क़ुरआन पाक की तिलावत करते । रात को सोते वक़्त रो-रोकर क़ुरआन पढ़ा करते । कोई ख़ौफ़ की आयत पढ़ते तो इस्तिग़फ़ार पढ़ते और रहमत की आयत पर दुआ करते । एक रात एक ही सूरा रात भर पढ़ते । एक रात सूरा अनफ़ाल सुबह तक पढ़ते रहे । आयतों में क़ियामत का ज़िक्र आता तो तड़प-तड़पकर रोने लगते और कभी-कभी बेहोश हो जाते । रातों को क़ुरआन पढ़ते-पढ़ते सो जाते, जागते तो फिर पढ़ने लगते और इस तरह सारी रात सोते और जागते रहते ।

मौत की याद बात-बात में रहती । कहा करते—

> "लोगो ! एक ऐसा घर देखो जिसमें कीड़े रेंग रहे होंगे, पीप बह रही होगी और कीड़े-मकोड़े उसमें तैर रहे होंगे ।"

यह कहकर रोते, और रोत-रोते हिचकियाँ बँध जातीं और बेहोश हो जाते। किसी बुज़ुर्ग को ख़त लिखते और नसीहत तलब करते कि फ़ौरन जवाब दीजिए; कहीं ऐसा न हो कि मौत आ दबोचे ।

आख़िरत का डर

सारे काम दिल में आख़िरत का डर लिए हुए करते । एक बार बातों-बातों में बीवी फ़ातिमा को ख़लीफ़ा होने से पहले ठाठ-बाट का हाल सुनाने लगे । उन्होंने कहा— "आज तो माशा अल्लाह आप उस वक़्त से ज़्यादा बाइख़तियार हैं और ख़िलाफ़त आप के हाथ में है ।" बीवी से यह सुनकर फ़रमाया, "ऐ फ़ातिमा ! अगर मैं अपने परवरदिगार की नाफ़रमानी करूँ तो बड़े दिन के आज़ाब से डरता हूँ ।" फ़ातिमा यह सुनकर रो पड़ीं और दुआ की— "ऐ अल्लाह ! इनको दोज़ख़ से निजात देना ।"

क़ियामत का ज़िक्र आता तो चीख़ उठते । उठकर घर भर में फिरने लगते और ज़बान से कहते जाते, "अफ़सोस उस दिन पर जिसमें लोग बिखरे हुए पतंगों की तरह और पहाड़ धुनके हुए ऊन की तरह होंगे ।"

अल्लाह के अज़ाब से हर पल काँपते रहते, यहाँ तक कि तेज़ हवा चलती तो चेहरे का रंग बदल जाता अगर कोई वजह पूछता तो कहते कि हवा ही ने क़ौमों को तबाह किया ।

रसूल (सल्ल०) की मुहब्बत

रसूले करीम (सल्ल०) की मुहब्बत अगर किसी मोमिन के दिल में न हो और यह मुहब्बत उसके अमल व किरदार से ज़ाहिर न होती हो तो उसके ईमान पर भरोसा नहीं किया जा सकता । फिर ऐसी ज़बानी मुहब्बत भरोसे के लायक़ भी नहीं । रसूल (सल्ल०) की मुहब्बत का तक़ाज़ा तो यह है कि आप (सल्ल०) पर और आप (सल्ल०) के हुक्मों पर आदमी अपनी ज़ात, अपने ख़ानदान और अपने मालो दौलत को क़ुरबान कर दे । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) को रसूले करीम (सल्ल०) से जो मुहब्बत थी उसका असर उनकी ज़िंदगी पर इतना गहरा था कि हर काम उसी तरह करने की कोशिश करते थे जैसा हुज़ूर (सल्ल०) ने किया । ख़ानदाने रसूल (सल्ल०) से ताल्लुक़ रखनेवाले लोगों से नबी करीम (सल्ल०) की ज़िंदगी के हालात पूछते रहते, अगर कोई आदमी रसूल (सल्ल०) की शान में भूलकर भी गुस्ताख़ी करता तो बेहद नाराज़ होते ।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की मुहब्बत का तक़ाज़ा है कि आप (सल्ल०) के ख़ानदानवालों से भी मुहब्बत की जाए । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) रसूल (सल्ल०) के ख़ानदानवालों से बेहद प्यार करते थे ।

एक बार उनके घर हज़रत अली (रज़ि०) के घराने की एक औरत आईं तो उनसे कहा— "दुनिया भर में मुझको तुम्हारे ख़ानदान से ज़्यादा कोई प्यारा नहीं । तुम ख़ुद मुझे मेरे ख़ानदानवालों से ज़्यादा अज़ीज़ हो ।"

हज़रत मुआविया (रज़ि०) और हज़रत अली (रज़ि०) के दरमियान आपस में अनबन हो गई और वह आख़िर तक बाक़ी रही । इस अनबन के दौरान एक-दूसरे को ग़लत लफ़्ज़ों से याद किया करते । यह सिलसिला आगे चलकर हज़रत अली (रज़ि०) और उनके ख़ानदान में तो बन्द हो गया, मगर उमैया ख़ानदान में जारी रहा । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने अपने ख़ानदानवालों को ऐसे अल्फ़ाज़ इस्तेमाल करने से रोक दिया जिनसे हज़रत अली (रज़ि०) की शान में गुस्ताख़ी होती थी, जब ख़ुद भी हज़रत अली (रज़ि०) का ज़िक्र करते तो उनकी

अज़मत (बड़ाई) के वाक़िआत बयान करते ।

एक बार हज़रत अली (रज़ि०) का आज़ाद किया हुआ एक ग़ुलाम आपके पास आया और बोला कि मैं मदीने का रहनेवाला हूँ । क़ुरआन मजीद का हाफ़िज़ हूँ, मगर बैतुलमाल के रजिस्टर में मेरा नाम नहीं । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने पूछा, "किस ख़ानदान से ताल्लुक़ रखते हो ?" उसने अपना परिचय कराया तो आपकी आँखों में आँसू आ गए और बोले— "मैं ख़ुद अली (रज़ि०) का ग़ुलाम हूँ । अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया है कि मैं जिसका मौला हूँ अली भी उसके मौला हैं ।" यह कहकर अपने ग़ुलाम हज़रत मुज़ाहिम से पूछा—"इस तरह के लोगों को बैतुलमाल से क्या दिया जाता है ?" उन्होंने बताया, "सौ–दो सौ दिरहम ।" फ़रमाया, "चूँकि अली (रज़ि०) इसके वली थे इसलिए पचास दीनार दो ।"

हज़रत उसामा (रज़ि०) से अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को जैसी मुहब्बत थी सब जानते हैं । एक बार उनकी बेटी तशरीफ़ लाईं, तो हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ख़ुद उनके इस्तिक़बाल के लिए उठे । आगे बढ़कर बड़ी इज़्ज़त के साथ लाए; अपनी जगह पर बिठाया, हाल-चाल पूछा और जो ज़रूरत उन्होंने बयान की उसे पूरा किया ।

रसूल (सल्ल०) के ख़ानदान की शान बढ़ाने में अपने ख़ानदानवालों की नाराज़गी की भी परवाह न करते थे । एक बार बहुत-से लोग मिलने के लिए आए । उनमें उनके अपने ख़ानदान के बड़े-बड़े लोग भी थे, लेकिन हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि०) के ग़ुलाम को सबसे पहले मुलाक़ात के लिए बुलाया। इस पर ख़ानदानवालों ने जलकर कहा—

> "उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ को सब कुछ करने के बाद भी अभी तसल्ली नहीं हुई, अब तो इब्ने अब्बास के ग़ुलाम भी इतने बढ़ गए हैं कि हमारी गर्दनें फाँदकर जाते हैं ।"

रसूल(सल्ल०) के शहर यानी मदीना से बेहद मुहब्बत करते । हरमे मदीना के अन्दर पेड़ या घास काटने से मना कर दिया था । मदीने की गवर्नरी से इस्तीफ़ा देकर जब शाम को चले तो मुड़-मुड़कर मदीना की ओर देखते थे और आँखों से आँसुओं की झड़ी लगी हुई थी ।

धैर्य और सहनशीलता

अपने बारे में कठोर शब्दों को सुनकर ख़ुशी-ख़ुशी बर्दाश्त कर लेने को धैर्य

और सहनशीलता कहते हैं । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) में यह गुण बड़ी हद तक मौजूद था ।

एक बार उनके एक गवर्नर अब्दुल हमीद बिन अब्दुर्रहमान ने लिखा कि मेरे सामने एक ऐसा मुजरिम पेश किया गया जो आपको गालियाँ देता है, मैंने पहले चाहा कि उसे क़त्ल कर दूँ, लेकिन फिर सोचा कि आपकी राय ले लूँ । इसलिए आपका हुक्म आने तक उसे क़ैद कर दिया है । ख़लीफ़ा ने जवाब में लिखा—

> "अगर तुम उसे क़त्ल कर देते तो मैं तुमसे क़िसास[1] लेता । अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के सिवा किसी और को गाली देने पर क़त्ल करना जायज़ नहीं, इसलिए अगर तुम्हारा जी चाहे तो उसको गाली दे लो वरना छोड़ दो ।"

एक बार मिम्बर पर ख़ुतबा दे रहे थे, उसी हालत में एक शख़्स ने कहा—"मैं गवाही देता हूँ कि तुम फ़ासिक़—गुनहगार हो ।" फ़रमाया— "तुम झूठे गवाह हो, मैं तुम्हारी गवाही नहीं मानता।" इसके सिवा उससे कुछ न कहा ।

एक बार एक आदमी ने बुरा-भला कहा । आप चुप बैठे सुनते रहे, लोग बोले "आप चुप क्यों हैं ?" जवाब दिया, "तक़वा (परहेज़गारी) ने मुँह पर लगाम लगा दी है ।"

एक बार रात को मस्जिद में गए । मस्जिद में एक आदमी सो रहा था, अँधेरे में उसे ठोकर लग गई । झल्लाकर बोला– "क्या पागल हो ?" बोले "नहीं" चपरासी ने चाहा कि उस आदमी को सज़ा दे, लेकिन मना किया और समझाया, "भाई ! इसने तो मुझसे पूछा था कि क्या पागल हो ? मैंने जवाब दे दिया कि 'नहीं', चलो क़िस्सा ख़त्म।"

एक बार एक आदमी ने ऐसा कठोर शब्द कहा कि उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) बिलबिला कर रह गए । उससे कहा— " तू चाहता है कि मैं तेरे साथ ऐसा सलूक करूँ कि कल क़ियामत में पकड़ा जाऊँ, मगर मैं ऐसा नहीं करूँगा ।"

एक बार एक आदमी ने काग़ज़ का एक पुलन्दा उनकी तरफ़ फेंका । पुलन्दा आपके मुँह पर पड़ा, चोट लगी और ख़ून बहने लगा। लेकिन सब्र किया और पुलन्दे को खोला । उसकी अर्ज़ी निकालकर पढ़ी और उसकी ज़रूरत पूरी कर दी ।

एक बार एक बच्चे ने उनके बच्चे को मारा । लोग उसे पकड़कर उनकी बीवी फ़ातिमा के पास ले गए । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने शोर-ग़ुल सुना

---

1. जान का बदला, यानी तुमको भी क़त्ल किया जाता ।

तो घर गए । इतने में उस बच्चे की माँ भी आई और बोली, "यह बच्चा मेरा है और इसका बाप मर चुका है ।" ख़लीफ़ा ने पूछा— "इसको वज़ीफ़ा मिलता है ?" बोली, "नहीं।" हुक्म दिया कि इस बच्चे के नाम वज़ीफ़ा जारी कर दिया जाए । उस मौक़े पर बीवी ने टोका "इस शर्त के साथ कि मेरे बच्चे को फिर न मारे ।" फ़रमाया, "फ़ातिमा ! तुमने तो उसे घबरा दिया ।"

एक बार एक आदमी ने गुस्ताख़ी की । उन्हें ग़ुस्सा आ गया । हुक्म दिया कि उसे नंगा करके कोड़े मारो, लेकिन जब कोड़े लगाने का वक़्त आया तो कहा, "इसे छोड़ दो ; मैंने वह हुक्म ग़ुस्से में दिया था ।"

सब्र

अकसर मुसीबत पड़ने पर सब्र का दामन इनसान के हाथ से छूट जाता है और वह हालात से असर लिए बिना नहीं रहता । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ऐसे मौक़ों पर भी बड़े सब्र से काम लेते थे । यहाँ हम सिर्फ़ एक वाक़िआ लिखते हैं, वैसे उनकी इस ख़ूबी के बारे में बहुत-से वाक़िआत बयान किए जाते हैं ।

उनके एक बेटे थे अब्दुल मलिक । अब्दुल मलिक चाल-चलन में हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) के ही समान थे । बड़े ज़हीन और समझदार थे । बराबर बाप को दीन की बातें याद दिलाते, ख़िलाफ़त में उनका हाथ बटाते और उन्हें अच्छे-नेक मशविरे भी देते । इन ख़ूबियों के कारण सब उन्हें पसंद करते थे । एक भाई थे सह्ल बिन अब्दुल अज़ीज़, अपनी ख़ूबियों की वजह से वे भी बहुत प्यारे थे । तीसरे उनके ग़ुलाम हज़रत मुज़ाहिम थे जो गोया हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के हाथ-पैर थे । ये तीनों प्यारे चँद दिनों के अन्दर ही अल्लाह को प्यारे हो गए (इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन)[1] ।

लोगों का विचार था कि उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) से ये सदमे बरदाश्त न होंगे और वे रोए बग़ैर न रह सकेंगे, लेकिन उनका सब्र देखकर लोग दंग रह गए ।

वे अपने प्यारे बेटे की मैयत को दफ़न कर रहे थे कि एक आदमी ने बाएँ हाथ का इशारा करके कहा, "अल्लाह तआला अमीरुल मोमिनीन को सब्र दे" अमीरुल मोमिनीन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने देखा, बोले— "बाएँ हाथ से इशारा मत करो, दाहिना हाथ क़ाम में लाओ ।" इशारा करनेवाला आदमी

1. हम सब अल्लाह के हैं और हम सब अल्लाह की तरफ़ पलटकर जानेवाले हैं।

पुकार उठा —

> "ख़ुदा की क़सम ! मैंने इससे ज़्यादा हैरत की बात नहीं देखी कि एक आदमी अपने प्यारे बेटे की लाश को दफ़न कर रहा है और इस हाल में भी उसे दाएँ-बाएँ का होश है ।"

लोग मातमपुर्सी (समवेदना प्रकट करने) के लिए घर पर आते और ऐसी बातें करते कि लोग रो पड़ते, लेकिन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) सब्र और शुक्र की ही बातें करते ।

एक दिन हज़रत रबीअ बिन सबरा (रह०) आए और बोले— "अल्लाह तआला आपको बहुत ज़्यादा अज्र अता फ़रमाए । आपने चंद ही दिनों में तीन सदमे उठाए । ख़ुदा की क़सम ! मैंने आपके बेटे अब्दुल मलिक, आपके भाई सहल और आपके ग़ुलाम मुज़ाहिम से बढ़कर किसी का बेटा, किसी का भाई और किसी का ग़ुलाम नहीं देखा ।"

यह सुनकर हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने गर्दन झुका ली । पास बैठे हुए एक आदमी ने हज़रत रबीअ से कहा— "तुमने अमीरुल मोमिनीन को बेचैन कर दिया ।" यह सुनकर अमीरुल मोमिनीन ने गर्दन उठाई और बोले—

> "क़सम है उस ज़ात की जिसने उनकी मौत का फ़ैसला किया! मैंने यह फ़ैसला पसंद किया ।"

इसके बाद एक तक़रीर की और मरहूम बेटे, भाई और ग़ुलाम की ख़ूबियाँ बयान कीं । इसके बाद हुक्म जारी कर दिया कि मुल्क भर में रोना-पीटना कहीं न किया जाए ।

ईमानदारी और सच्चाई

बैतुलमाल पर पूरा क़ब्ज़ा हो और ख़िलाफ़त हाथ में हो, इसके बावजूद ख़लीफ़ा फ़क़ीरों जैसी ज़िंदगी गुज़ारे । यह बात ख़िलाफ़ते राशिदा के बाद कहीं और नज़र नहीं आती और नज़र आती भी है, तो उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की ख़िलाफ़त में । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) और ख़ुलफ़ाए राशिदीन के अलावा सारे ख़लीफ़ा बैतुलमाल को अपनी ज़ात पर ख़र्च करने से बच न सके । बच ही न सके बल्कि इससे अपनी ज़ात के लिए बड़े ठाट-बाट जमाए । लेकिन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) का किरदार (Character) कैसा रहा? बहुत-से वाक़िआत में से कुछ पेश किए जा रहे हैं जिन से पूरी तरह इसका अन्दाज़ा लगाया जा सकता है ।

● रात को ख़िलाफ़त का काम करते तो बैतुलमाल का चिराग़ जलाते, लेकिन जब अपना काम करने लगते तो उसे बुझा देते और अपने घर का चिराग़ जलाते और यह इसलिए करते कि आख़िरत में पकड़ न हो ।

● उनके प्राईवेट सेक्रेटरी फ़रात बिन मुस्लिम जो ख़ुद भी ख़ुदा से बहुत ज़्यादा डरनेवाले थे, हर जुमा को सरकारी काग़ज़ात पेश किया करते थे । एक दिन हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उनके सरकारी थैले से काग़ज़ का एक छोटा-सा टुकड़ा निकाल लिया और काम में ले आए । फ़रात ने दिल में कहा कि अमीरुल मोमिनीन से चूक हो गई । दूसरे जुमा को आए तो उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उन्हें किसी काम से बाहर भेज दिया और काग़ज़ का उतना ही बड़ा टुकड़ा उनके थैले में रख दिया । फ़रात ने आकर देखा तो अमीरुल मोमिनीन के लिए दुआ की ।

● एक बार हज़रत मुज़ाहिम से कहा— "एक रहल बनवाओ !" मुज़ाहिम ने रहल बनवा दी। रहल को पसंद किया । फिर पूछा— "कहाँ से लाए ?" बोले," लकड़ी बैतुलमाल में बेकार पड़ी सड़ रही थी उसी की बनवा ली ।" कहा, "अच्छा उसकी क़ीमत बाज़ार में पूछकर आओ ।" बाज़ार में आधा दीनार क़ीमत बताई गई । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने एक दीनार बैतुलमाल में जमा करा दिया ।

● एक बार सरकारी सेब ग़रीबों में बाँट रहे थे कि इतने में उनका एक छोटा बच्चा आ गया, उसने एक सेब उठा लिया, उन्होंने सेब उसके हाथ से छीन लिया और ढेर में डाल दिया । बच्चा रोता हुआ घर गया । माँ ने बाज़ार से सेब मँगवा दिया । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) जब घर गए तो बच्चे को सेब खाते देखा । ठिठके ! पूछा, "यह सेब कहाँ से आया ?" बीवी ने बताया कि बाज़ार से मँगवाया गया है । ख़ुश होकर फ़रमाया— "तुम बहुत अच्छी माँ हो । मैंने सेब बच्चे से छीना तो समझो कि अपने दिल से छीना, मगर मैं पसंद नहीं करता कि ख़ुदा के सामने मुसलमानों के सेब के लिए अपने आपको बरबाद कर दूँ ।"

● एक बार उनकी बीवी ने एक मोती भेजा और अर्ज़ किया कि बैतुलमाल से इसका जोड़ा भेज दीजिए । ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने आग की दो चिनगारियाँ भेज दीं कि इन्हें पहन लो तो मोती भेजूँ । यह इशारा ख़ियानत की तरफ़ था कि अगर अपनी औलाद के लिए बैतुलमाल में ख़ियानत की तो आख़िरत में ऐसे अज़ाब से दोचार होना पड़ेगा ।

शर्म व हया

मिज़ाज में बड़ी शर्म व हया थी । हम्माम में जाते तो बच्चों और ग़ुलामों के सिवा सबको हम्माम से बाहर निकलवा देते । कोई ज़ोर से बातें करता तो कहते— "बस इतना काफ़ी है कि आदमी बात सुन ले ।" बदन के जिन हिस्सों के नाम लेने से शर्म आती है उनका नाम भी न लेते, यहाँ तक कि बग़ल का नाम भी न लेते ।

एक बार बग़ल में फोड़ा निकला । लोगों ने पूछा, "फोड़ा कहाँ निकला है ?" कहा— "हाथ के नीचे।"

इसी प्रकार एक बार किसी बैठक में एक आदमी ने दूसरे से बात करते हुए यह जुमला इस्तेमाल किया—"तेरी बग़ल के नीचे" आपने यह सुनकर कहा— "इससे बेहतर तरीक़े से बात क्यों नहीं करते ?" वह आदमी पढ़ा-लिखा और ज़बान का जानकार था, ताज्जुब से बोला— "कैसे ?" बोले, "कहते हाथ के नीचे"

रहमदिली

अल्लाह तआला ने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) को बड़ा रहमदिल बनाया था । कोई अपनी ज़रूरत पेश करते वक़्त दर्दनाक अल्फ़ाज़ इस्तेमाल करता तो रो पड़ते । जानवरों तक को तकलीफ़ में देखते तो सहन न होता । उनके पास एक ख़च्चर था । ग़ुलाम उस ख़िच्चर को किराये पर चलाता और रोज़ाना एक दिरहम लाकर देता । एक दिन डेढ़ दिरहम लाकर दिया तो कहा— "आज तुमने इससे ज़्यादा काम लिया, इसलिए इसे तीन दिन आराम दो ।" डाक के जानवरों के बारे में उनका हुक्म था कि उन्हें तेज़ तो ले जाया जाए मगर लगाम न लगाई जाए और कोड़े में चुभनेवाला नोकदार लोहा भी न लगाया जाए । मिस्र के गवर्नर को लिखा— "मुझे मालूम हुआ है कि ऊँट पर हज़ार रतल[1] का बोझ लादा जाता है । ख़बरदार ! अब मुझे ख़बर न मिले कि ऊँट पर सौ रतल से ज़्यादा बोझ लादा गया ।"

नसीहत हासिल करना

दूसरों से नसीहत हासिल करना बड़ी अच्छी बात है, लेकिन नसीहतें बुरे आदमियों को बुरी लगती हैं । फिर बादशाहों का दूसरों से नसीहत हासिल करना तो दरकिनार,

---

1. एक रतल = एक पौण्ड=400 ग्राम (लगभग) —अनुवादक

अगर नसीहत करनेवाले की जान ही सलामत रह जाए तो बहुत ग़नीमत है । लेकिन यह ख़ूबी भी हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) में बहुत ज़्यादा पाई जाती थी । इसी लिए वे अल्लाह से बहुत ज़्यादा डरनेवाले, मुत्तक़ी और परहेज़गार बुज़ुर्गों को अपने पास बुलाते और कभी ख़ुद उनकी ख़िदमत में हाज़िर होते । इमाम हसन बसरी (रह०), सईद बिन मुसैयिब (रह०), सालिम बिन अब्दुल्लाह, मुहम्मद बिन कअब (रह०) और ऐसे ही दूसरे लोगों के साथ उठना-बैठना बहुत ज़्यादा था, और ये बुज़ुर्ग ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) को निहायत आज़ादी और ख़ुशी के साथ नसीहतें किया करते थे ।

एक बार इराक़ के सारे बुज़ुर्गों को बुलाया। हसन बसरी (रह०) बीमारी की वजह से न आ सके, मगर ख़त भेज दिया । अमीरुल मोमिनीन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) यह ख़त पढ़ते और रोते और आँखों से लगाते ।

एक बार मशहूर आलिम इब्न अतहम (रह०) आए और कहा— "आपको ख़ुश करूँ ?" फ़रमाया, "नहीं ।" फिर कहा, "नसीहत करूँ ?" फ़रमाया, "ज़रूर ।" इब्न अतहम ने निहायत उमदा ख़ुतबा दिया । इसमें नसीहतें थीं और उनका रुख़ उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की तरफ़ था ।

सादगी

यह बात मशहूर है कि उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) जब ख़लीफ़ा नहीं थे, तो सबसे बड़े बादशाह थे, लेकिन जब ख़लीफ़ा हुए तो राहिब (फ़क़ीर) हो गए । यह एक ईसाई बादशाह का कथन है । मुसलमानों का कहना है— "उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ख़लीफ़ा होकर उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) हो गए, हसन बसरी (रह०) हो गए, इमाम ज़ुहरी (रह०) हो गए ।" इतिहास की किताबें ऐसी हज़ारों मिसालों से भरी हुई हैं । हम यहाँ दोचार मिसालें पेश करते हैं :–

● एक बार जुमा की नमाज़ पढ़ाकर बैठे तो लोगों ने देखा कि कमीज़ के आगे-पीछे पेबंद लगे हैं । एक आदमी ने कहा— "अमीरुल मोमिनीन ! ख़ुदा ने आपको सब कुछ दिया है, क्या अच्छा हो कि आप अच्छे क़िस्म का कपड़ा पहनें ।" यह सुनकर गर्दन झुका ली, फिर सिर उठाकर कहा, "मालदारी की हालत में दरमियाना (बीच की) चाल और ताक़त पाकर माफ़ी का तरीक़ा अपनाना सबसे बेहतर है ।"

● बीमार हुए तो लोग पूछने-देखने आने लगे । इस हालत में ख़लीफ़ा एक मैली और फटी हुई क़मीज़ पहने हुए थे । यह देखकर एक रिश्तेदार बुज़ुर्ग ने फ़ातिमा से कहा— "अमीरुल मोमिनीन की क़मीज़ धो डालो ।" दूसरे दिन क़मीज़ फिर

सी की वैसी ही देखी तो फ़ातिमा को डाँटा और कहा, "मैंने कमीज धोने के लिए कहा था, लोग मिलने-देखने को आते हैं, मगर तुमने परवाह न की ?" ख़लीफ़ा की बीवी फ़ातिमा ने जवाब दिया— "अमीरुल मोमिनीन के पास इस कमीज़ के सिवा दूसरी कमीज़ नहीं है ।"

● एक बार आप घर से देर से निकले । लोगों ने वजह पूछी। फ़रमाया कि रात मैंने मसूर और चने की दाल खा ली, क़ब्ज हो गया । यह सुनकर एक साहब ने कहा— "क़ुरआन में है — फ़-कुलू मिन तैयिबाति मा-र-ज़क़्नाकुम' यानि 'हमने जो रिज़्क़ तुमको दिया है उसमें से पाक़ चीज़ें खाओ' । लेकिन आप दाल-दलिया पर ही सब्र करते हैं । फ़रमाया, "तुमने इसका मतलब उलटा लिया, इसका मतलब हलाल रोज़ी है, न कि मज़ेदार पकवान ।"

● एक बार घर में उनके ग़ुलाम को दाल खाने को मिली तो वह झुंझलाकर बोला, "रोज़-रोज़ दाल ?" घर से जवाब मिला— "तुम्हारे आक़ा अमीरुल मोमिनीन भी रोज़ यही खाते हैं और यह भी उनको भर पेट नहीं मिलती ।"

● एक बार एक देहाती औरत आई और अमीरुल मोमिनीन का घर तलाश करने लगी। लोगों ने घर बताया । वह घर में गई तो बीवी फ़ातिमा से कहा— "यह अमीरुल मोमिनीन का घर है ? मैं तो इस उजाड़ और वीराने में इसलिए आई थी कि अपना घर बनाऊँगी ।"

बीवी फ़ातिमा ने जवाब दिया— "अमीरुल मोमिनीन ने तुम्हीं लोगों का घर बनाने के लिए यह घर उजाड़ और वीरान कर रखा है ।" इतने में ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) घर में तशरीफ़ लाए । देहाती औरत को देखकर उसका हाल पूछा । फिर उसकी चार लड़कियों का वज़ीफ़ा मुक़र्रर कर दिया ।

● एक बार अंगूर खाने को जी चाहा । बीवी से एक दिरहम माँगा । वहाँ से जवाब 'ना' में मिला, तो एक पैसा माँगा । जवाब मिला कि आप अमीरुल मोमिनीन होकर एक पैसे की क़ुदरत नहीं रखते । फ़रमाया, "जहन्नम की हथकड़ियों से फिर भी बेहतर है ।"

● एक बार उनके बेटे अब्दुल्लाह ने उनसे कपड़े माँगे, उन्होंने अपने दर्ज़ी के पास भेज दिया कि जाकर ले लो । अब्दुल्लाह दर्ज़ी के पास गए, तो वहाँ उसने गाढ़े के थान दिखाए । अब्दुल्लाह ने पूछा, "यही कपड़ा अमीरुल मोमिनीन के लिए आया है ?" दर्ज़ी बोला, "हमारे पास तो यही आया है ।"

● एक बार अपनी बेटियों के यहाँ गए । लड़कियों ने देखा तो मुँह पर हाथ रख कर अगवानी के लिए आगे बढ़ीं । उन्होंने मुँह पर हाथ रखने की वजह पूछी ।

लड़कियों ने बताया, "आज मसूर की दाल और प्याज के सिवा घर में कुछ न था वही खा लिया। ऐसा इसलिए किया कि आप प्याज की महक से परेशान न हों।" फ़रमाया, "बेटियो ! तुमको इससे क्या फ़ायदा होगा कि तुम अच्छे-अच्छे खाने खाओ और तुम्हारा बाप जहन्नम में झोंक दिया जाए।" यह सुनकर लड़कियाँ चीख़ मारकर रो पड़ीं।

मिज़ाज की नर्मी

एक बार कुछ बावर्ची आए और अपने हक़ों के सिलसिले में बहस व तकरार करने लगे। दोस्तों ने कहा कि उन्हें डाँटकर ख़ामोश कर दीजिए। लेकिन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) बहुत-ही नर्मी से उनके सवालों के जवाब देते रहे। यहाँ तक कि कुछ शर्तों पर सब राज़ी होकर चले गए। अब उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने दोस्तों से कहा, "जब मरीज़ दवा से अच्छा हो जाए तो दाग़ना ठीक नहीं।"

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) सबसे ज़्यादा हज्जाज से ख़फ़ा थे, लेकिन जब एक आदमी ने उनके सामने हज्जाज को गाली दी तो बोले, "जब मज़लूम ज़ालिम को बुरा कहकर अपना बदला ले लेता है तो ज़ालिम को उसपर बड़ाई हासिल हो जाती है।"

बराबरी

उमैया ख़ानदान की ख़िलाफ़त के ज़माने में बड़े लोगों को अपनी बड़ाई का एहसास होने लगा था और यह एहसास सबसे ज़्यादा ख़ानदाने उमैया के लोगों में था। ख़लीफ़ा से ताल्लुक़ की बिना पर लोग उनका अदब और एहतराम इस तरह करने लगे थे जैसे बादशाहों का होता है। ये लोग जनाज़े की नमाज़ में शामिल होते तो उनके लिए चादर बिछाई जाती। लोग उनको देखकर खड़े हो जाते। उन्हें हर जगह ऊँची जगह पर बिठाया जाता, उन्हें पहले सलाम किया जाता और हर मौक़े पर उनकी इज़्ज़त बढ़ाई जाती। लेकिन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) जब ख़लीफ़ा हुए तो उन्होंने ये सारी चीज़ें ख़त्म कर दीं। ख़लीफ़ा होते वक़्त शाही सवारियाँ भी वापस कर दी थीं और कहा, "मेरा ख़च्चर काफ़ी है।" कोतवाल को मना कर दिया कि बरछा लेकर आगे-आगे न चले, इससे लोगों के दिलों पर ख़्वाह-मख़्वाह का रौब पड़ता है। लोग उनके सामने खड़े हुए तो ख़ुद भी खड़े हो गए और कहा— "अगर तुम खड़े रहोगे तो हम भी खड़े रहेंगे, तुम बैठोगे

तो हम भी बैठेंगे । लोगो ! सिर्फ़ ख़ुदा के सामने खड़े होना चाहिए ।" जनाज़े की नमाज़ पढ़ने जाते तो चादर हटवा देते । ख़ुद आम मुसलमानों के बीच खड़े होते और अपने ख़ानदानवालों को भी इसी तरह खड़ा करते । सरकारी अफ़सरों की ताज़ीम के लिए उठने को मना कर दिया । सलाम में ख़ुद पहल करते और ख़ानदानवालों को पहले सलाम करने की तलक़ीन करते और इसकी फ़ज़ीलत बयान करते ।

एक बार रात को एक साहब उनके पास बैठे बातचीत कर रहे थे, इतने में चेराग़ झिलमिलाने लगा । आपका नौकर सो चुका था । उन साहब ने कहा, "इसे जगा दूँ ?" फ़रमाया, "नहीं।" उन साहब ने ख़ुद ठीक करना चाहा तो उन्हें मना कर दिया कि मेहमान से काम लेना ठीक नहीं । इसके बाद ख़ुद उठकर चिराग़ की लौ ठीक कर दी । फिर वापस आए तो फ़रमाया— "जब मैं ठीक करने गया तो भी उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ही था और अब वापस आया तो भी उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ही हूँ ।"

एक बार सो रहे थे । बांदी पंखा झल रही थी, पंखा झलते-झलते उसे नींद लगी और वह सो गई । वे जागे तो उसे सोते पाया । ख़ुद उसको पंखा झलने लगे । वह जागी तो घबराई। आप (रह०) ने फ़रमाया, "तू भी मेरी तरह इनसान है, तुझको भी गर्मी लगती है, जिस तरह तूने मेरे लिए पंखा झला, मैंने भी तेरे लिए झल दिया।" यह सुनकर बाँदी की घबराहट दूर हुई ।

एक बार एक पादरी ने दावत की । उनके सामने खाने की थाल पेश की गई । उसमें पिस्ता और बादाम भरे थे । देखकर पूछा— "क्या सब लोगों के लिए यही है ।" जवाब मिला— "नहीं ! यह ख़ास आपके लिए है ।" बोले, "तो मैं नहीं खाता, वापस ले जाओ ।"

एक बार एक आदमी ने उनकी बहुत तारीफ़ की । बोले, "मुझे अपने नफ़्स (मन) का हाल मालूम है । अगर तुमको मालूम होता तो मेरा मुँह न देखते ।"

लोगों के दरमियान इस तरह बैठ जाते कि अजनबी आते तो पहचान न पाते । ख़ानदान के लोग बड़े ही घमण्डी क़िस्म के थे, उनसे कम मिलते । एक बार उन्होंने शिकायत की कि आप मग़रूर हो गए हैं । बोले, "पहले मैं घर का एक लड़का था, तो तुम सब बिना इजाज़त दनदनाते चले आते, मेरा फ़र्श रौंदते और जो तुम्हारा जी चाहता करते थे । लेकिन ख़लीफ़ा होने के बाद मैंने यह फ़ैसला किया कि तुम्हारे मिज़ाज का सुधार करूँ । देखो ग़ुरूर सिर्फ़ ख़ुदा को शोभा देता है । मैं

ख़ुदा से क्यों कर लड़ सकता हूँ।" यह सुनकर लोग एक-दूसरे का मुँह देख लगे। घर की एक बूढ़ी बुज़ुर्ग औरत ने कहा, "मैंने लाख मना किया कि उ बिन ख़त्ताब के ख़ानदान की लड़की घर[1] में न लाओ, मगर मेरी किसी ने न सु अब वह देखो जो देख नहीं सकते।"

1. यह इशारा उम्मे-आसिम की तरफ़ है जो हज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) की पोती थीं और उनकी शाद अब्दुल अज़ीज़ बिन मरवान से हुई थी। इन्हीं बुज़ुर्ग बीवी से उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) पैद हुए।

जैसा राजा वैसी प्रजा

आम लोगों पर असर

हमने शुरू में एक जगह पर 'अन्नासु अला दीने मुलूकिहिम' यानी लोग अपने शासकों के तरीक़े पर चलते हैं के बारे में लिखा था। एक असर वह था जो मरवान, अब्दुल मलिक और वलीद वग़ैरह का रिआया पर पड़ा और एक असर उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) का पड़ा। असल में इस ज़िक्र से मेरा मक़सद यह था कि मैं लोगों को याद दिलाऊँ कि समाज के सुधार के लिए ऊपर जो चार तरीक़े[1] बयान किए गए हैं, उनमें सबसे असरदार तरीक़ा ख़लीफ़ा का ख़ुद अपना चाल-चलन है। अगर हुकूमत ग़लत है, तो सारे तरीक़े बेअसर होते हैं। अगर हुकूमत अच्छी है, तो दूसरे तरीक़े भी समाज के सुधार में मदद देते हैं, नहीं तो जमाअत तो बिगड़ती ही जाती है। हो सकता है कि निजी रूप से कुछ लोग परहेज़गार बने रहें। हुकूमत अपनी ताक़त से बुराइयों को दबा सकती है और नेकियाँ फैलाने में कामयाब हो सकती है। चुनाँचे उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की ख़िलाफ़त के जो असरात समाज और माहौल पर पड़े उनका बयान एक बुज़ुर्ग ने बड़ी ख़ूबी से किया है। फ़रमाया—

"वलीद बिन अब्दुल मलिक इमारतें बनवाने का बड़ा शौक़ीन था। लोग उसके ज़माने में मिलकर बैठते तो इमारतों का ज़िक्र करते।

सुलैमान बिन अब्दुल मलिक बड़ा खानेवाला और बहुत निकाह करनेवाला बादशाह था। लोग उसके ज़माने में खाने-पीने और बाँदियों के बारे में बातें करते।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ख़लीफ़ा हुए तो लोग एक-दूसरे से पूछते कि रात तुमने कौन-सा वज़ीफ़ा पढ़ा? कितना क़ुरआन याद किया? क़ुरआन कब शुरू किया था? कब ख़त्म करने का इरादा है? कितने रोज़े रखे? वग़ैरह-वग़ैरह।"

---

1. अच्छी सोच, अच्छी शिक्षा, अच्छी संगति, अच्छी हुकूमत

हुकूमतों के अच्छा और बुरा होने के बारे में उन बुज़ुर्ग का यह बेहतरीन तबसरा (टिप्पणी):—

"अन-नासु अला दीने मुलूकिहिम" (लोग अपने शासकों के तरीक़ों पर) की सबसे अच्छी ताबीर है। अब देखिए कि उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) यानी एक अच्छे ख़लीफ़ा के होने से अल्लाह तआला ने मुल्क पर क्या बरकतें उतारीं !

ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उलमा को ध्यान दिलाया कि वे क़ुरआन के हुक्मों को आम करें। इसका असर यह हुआ कि मुल्क में आम लोगों को दीन की ज़रूरी बातें मालूम होने लगीं और वे सही मानो में दीनदार बनने लगे। पाबँदी से नमाज़ पढ़ने लगे और लोगों के दिलों में आख़िरत का ख़ौफ़ पैदा हो गया। आख़िरत के ख़ौफ़ ने लोगों के अख़लाक़ व आदात (Habbits) पर बड़ा अच्छा असर डाला। लोग हराम व हलाल में फ़र्क़ करने लगे, उन्हें बेजा खेल-तमाशों से नफ़रत हो गई। वे नशीली चीज़ों से परहेज़ करने लगे ; बुराइयाँ दब गईं और चारों तरफ़ नेकियों का बोलबाला हो गया।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने हदीसों के जमा करने और फैलाने का हुक्म दिया। इसका असर यह पड़ा कि लोग हर वक़्त रसूल (सल्ल०) की हदीसों की तरफ़ मुतवज्जोह रहने लगे। लोगों को हदीसों से ऐसी दिलचस्पी और लगाव पैदा हो गया कि घर-घर उनका चर्चा होने लगा। इतिहास लिखनेवालों ने लिखा है कि आगे चलकर फ़िक़्ह के जो चार इमाम, इमामे आज़म हज़रत अबू हनीफ़ा (रह०), हज़रत इमाम मालिक (रह०), हज़रत इमाम शाफ़ई (रह०) और हज़रत इमाम अहमद बिन हम्बल (रह०) हुए। उनके लिए उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ही ने ज़मीन हमवार कर दी थी।

जगह-जगह अच्छी बैठकों, हलक़े और जलसा गाहें बना देने से बुज़ुर्गों का छोटों से सीधे ताल्लुक़ क़ायम हो गया। बुज़ुर्गों की आदतों का आम लोगों पर असर पड़ा और वे इस्लाम के साँचे में ढलने लगे और अब वही इस्लाम जो आम लोगों से दूर होता जा रहा था, उनके क़रीब आने लगा।

फ़ौज की तरफ़ ध्यान देने से मुल्क में अमनो अमान क़ायम हुआ। बग़ावतें जो आए-दिन होती रहती थीं, ख़त्म हो गईं।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने हुक्म दिया कि दीन की दावत पेश किए बग़ैर दुश्मन फ़ौज पर हमला न किया जाए। इसका असर यह पड़ा कि इस्लाम-दुश्मन फ़ौजों को इस्लाम और इसके तक़ाज़े समझने का मौका मिला। ग़ैर मुल्की बादशाहों से राबता क़ायम करने का मौका मिला और उन्होंने इस्लाम को समझना शुरू कर

दिया । चुनाँचे बहुत-से ग़ैर मुस्लिम बादशाह मुसलमान हो गए मावरा-उन-नहर के बादशाह, सिन्ध के कुछ राजा, ठाकुर और बर्बर के रईस अपनी तमाम रिआया के साथ इसी तरह मुसलमान हुए ।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की ख़िलाफ़त से पहले हज्जाज की ज़ालिमाना पॉलिसी और नालायक़ गवर्नरों के चाल-चलन और उनके तौर-तरीक़े से दुनिया में इस्लाम की ख़ूबियों का तआरुफ़ (परिचय) बड़े ग़लत ढंग से हो रहा था । जिज़या की वसूली ग़लत तरीक़े से होती और बहुत-से नाजायज़ टैक्स वसूल किए जाते थे । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने इन सब बुराइयों को ख़त्म किया तो लोगों पर ऐसा असर हुआ कि हज़ारों ग़ैर मुस्लिमों ने ख़ुशी-ख़ुशी इस्लाम क़बूल कर लिया ।

बैतुलमाल की आमदनी और ख़र्च इस्लामी क़ानून के मुताबिक़ होने लगा तो हर छोटे-बड़े को उसकी ज़रूरतों के मुताबिक़ फ़ायदा पहुँचा । रिआया ख़ुशहाल हो गई। लोग इतने ख़ुशहाल हो गए कि सदक़ा और ज़कात लेनेवाले ढूँढे से न मिलते थे । यहया बिन साद कहते हैं कि मुझे उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने अफ़्रीक़ा का सदक़ा वसूल करने और ख़र्च करने के लिए भेजा । मैंने जाकर सदक़ा वसूल किया । फिर हक़दार लोगों को बुलाया कि इसको बाँट दूँ, लेकिन कई बार एलान करने और बड़े इंतिज़ार के बाद भी कोई ज़रूरतमंद और फ़क़ीर नहीं आया तो मैंने इस रक़म से ग़ुलाम ख़रीदे और उन्हें आज़ाद कर दिया ।

एक बार मदीने से कुछ लोग मिलने आए । उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उनसे ग़रीबों का हाल पूछा । बताया गया कि जो लोग भीख माँगने जहाँ बैठे थे वे सब वहाँ से उठ गए और ख़ुदा ने उनको भीख माँगने से बेपरवाह कर दिया ।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के एक ख़ास आमिल अदी बिन अरतात ने एक बार ख़लीफ़ा को लिखा कि बसरा के लोग इतने ख़ुशहाल हो गए हैं कि अंदेशा है कहीं घमण्डी न हो जाएँ । जवाब दिया कि लोगों को हुक्म दो कि वे ख़ुदा का शुक्र अदा करें और 'अलहम्दुलिल्लाह' कहें कि ख़ुदा ने जन्नतवालों के लिए यही पसंद किया है ।

सबूत में बहुत-सी घटनाएँ पेश की जा सकती हैं, लेकिन हम उन्हें छोड़कर सिर्फ़ एक हदीस पेश करते हैं और इस पर हदीस के आलिमों की राय पेश करना चाहते हैं । यह हदीस नबी करीम (सल्ल०) की एक पेशीनगोई (भविष्यवाणी) है, जो हुज़ूर (सल्ल०) ने हज़रत अदी बिन हातिम (रज़ि०) से बयान की थी । हज़रत अदी (रज़ि०) का बयान है कि नबी करीम (सल्ल०) ने मुझसे कहा—

"क्यों अदी तुमने हियरा को देखा ? मैंने कहा कि देखा नहीं, सुना है । कहा, अगर तुम कुछ दिन और ज़िन्दा रहे तो देखोगे कि एक हौदज नशीन औरत हियरा से सफ़र करके आएगी और खाना-काबा का तवाफ़ करेगी और ख़ुदा के सिवा उसको किसी और का डर न होगा ।

अगर तुम कुछ दिनों और ज़िन्दा रहे तो देखोगे कि किसरा के ख़ज़ाने फ़तह हो गए, और अगर तुम कुछ दिनों और ज़िन्दा रहे, तो देखोगे कि एक आदमी मुट्ठी भर सोना या चाँदी लेकर उस आदमी की तलाश में निकलेगा जो उसको क़बूल कर ले, लेकिन उसको क़बूल करनेवाला कोई न मिलेगा ।"

हदीस के कुछ आलिमों का कहना है कि इस हदीस की दो पेशीनगोइयाँ हज़रत अदी (रज़ि०) की ज़िंदगी में पूरी हो गईं, लेकिन तीसरी उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के ज़माने में पूरी हुई कि लोग उनके गवर्नरों के पास ढेर-सा माल लाते और कहते कि ग़रीबों को बाँट दो । लेकिन गवर्नर यह कहकर वापस कर देते कि हमें फ़क़ीर नहीं मिलते ।

हुज़ूर (सल्ल०) की तीसरी पेशीनगोई को उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की ख़िलाफ़त के ज़माने में पूरा होते देखा तो हदीस के आलिमों ने हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०), हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०), हज़रत उसमान ग़नी (रज़ि०) और हज़रत अली (रज़ि०) की तरह उन्हें भी ख़लीफ़-ए-राशिद मान लिया । उनकी राय है कि ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन पाँच हैं और पाँचवे हैं हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०)। अल्लाह तआला ने उनकी ख़िलाफ़त के ज़माने में ऐसी बरकत अता फ़रमाई कि बच्चा-बच्चा धनी हो गया । हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) अल्लाह का शुक्र अदा करते हुए फ़ख़्र के साथ कहा करते—

"ख़ुदा हज्जाज पर लानत करे । उसमें न दीन की लियाक़त थी न दुनिया की । हज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) ने इराक़ से दस करोड़ अठाइस लाख दिरहम वसूल किए, ज़ियाद ने दस करोड़ पच्चीस लाख और हज्जाज ने ज़ुल्म व सितम करने पर दो करोड़ अस्सी लाख दिरहम वसूल किए (और उसने ईराक़ को तबाह व वीरान कर दिया ।), इस वीरानी के साथ ईराक़ मेरे क़ब्ज़े में आया तो मैनें दस करोड़ चौबीस लाख दिरहम वसूल किए, और अगर ज़िंदा रहा तो हज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) के ज़माने से ज़्यादा वसूल करूँगा ।"

असल बात यह है कि हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने लोगों के दिलों में ईमान की वह जोत जगा दी थी कि उनकी ज़िंदगी का मक़सद अल्लाह

की ख़ुशी बन गया था। वे दीन पर अमल करने लगे थे और सवाब कमाने के लिए बहाने तलाश करते। ज़कात, उशर और सदक़े दिल की ख़ुशी के साथ देते। इमदाद की रकमें अलग से भेजते और मक़ामी तौर पर ग़रीबों, मिस्कीनों, घरवालों, रिश्तेदारों और पड़ोसियों के हक़ों को दिल खोलकर अदा करते। इन्हीं सबका असर था कि अल्लाह की तौफ़ीक़ हरकत में आई और बरकतें नाज़िल हुईं। परती ज़मीन का मुनासिब इन्तिज़ाम किया तो वह सोना उगलने लगी।

ख़ानदाने उमैया पर असर

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की ख़िलाफ़त का एक असर तो वह पड़ा जो ऊपर बयान किया गया। एक असर उनके ख़ानदानवालों पर पड़ा। ख़ुद उनके बाल-बच्चे यूँ तो फ़क़ीरों की तरह हो गए, लेकिन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने उनकी तरबियत इस तरह की कि वे अपने हाल पर साबिर और शाकिर हो गए। लेकिन ख़ानदान के वे लोग जो अपनी ख़िलाफ़त के ज़माने से राजकुमारों की तरह रहते थे और उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की तवज्जोह और तरबियत के बावजूद उनका ज़ेहन सँवर न सका था, बल्कि ख़लीफ़ा की तरफ़ से उनके दिलों में ग़म और ग़ुस्सा बढ़ता जा रहा था। छीने हुए माल की वापसी ने उनकी अमीरी की ज़िन्दगी को ख़त्म कर दिया और उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) इस्लामी बराबरी के उसूलों को अमल में लाया तो उमैया ख़ानदान के लोगों की हैसियतें आम मुसलमानों जैसी हो गईं। इससे उनके दिलों को ज़बरदस्त ठेस पहुँची। उन्होंने तरह-तरह से अपना ग़ुस्सा ख़लीफ़ा पर उतारा, लेकिन ख़लीफ़ा ने कुछ फ़िक्र न की। ख़लीफ़ा से उनकी झड़पों की कहानियाँ बहुत हैं; उनमें से एक-दो यहाँ पेश की जा रही हैं—

एक बार ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) के सामने बाँदियाँ पेश की जा रही थीं। हर बाँदी को देखकर कहते— "यह अल्लाह और रसूल (सल्ल०) का माल है।" उस वक़्त अब्बास बिन अल-वलीद बिन अब्दुल मलिक भी मौजूद थे। जब कोई ख़ूबसूरत बाँदी पेश होती तो कहता— "अमीरुल मोमिनीन इसे अपने लिए रख लीजिए।" जब उसने बार-बार यही बात दोहराई तो ख़लीफ़ा ने डाँट दिया और कहा तुम मुझे ज़िना (व्यभिचार) की तरग़ीब (प्रेरणा) देते हो। यह सुनकर अब्बास वहाँ से उठा। ख़ानदानवालों से कहा, "ऐसे आदमी के दरवाज़े पर क्यों बैठे हो जो तुम्हारे बाप-दादा को ज़ानी (दुराचारी) कहता है।"[1]

---

1. उमैया ख़ानदान के ख़लीफ़ा अच्छी ख़ूबसूरत बाँदियों को अपने लिए ख़ास कर लिया करते थे।

एक बार तमाम ख़ानदान ने हिशाम बिन अब्दुल मलिक को उनके पास अपना सिफ़ारिशी बनाकर भेजा । उसने आकर कहा, "ऐ अमीरुल मोमिनीन ! मुझे ख़ानदान वालों ने अपना वकील बना कर भेजा है, वे लोग कहते हैं कि आप अपने माल के लिए अपने तरीक़े पर अमल कीजिए, लेकिन हमारे पुराने हक़ तो न मारिए ।" हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने फ़रमाया— "अगर तुम्हारे सामने किसी मामले के बारे में एक फ़ैसला हज़रत माविया (रज़ि०) का हो और एक अब्दुल मलिक का तो तुम दोनों में से किस पर अमल करोगे ?" हिश्शाम ने जवाब दिया, "पहलेवाले पर।" फ़रमाया, "तो मैं अल्लाह की किताब को सबसे पहले पाता हूँ और मैं उसी के मुताबिक़ हर आदमी को और हर उस चीज़ को जो मेरी अपनी है, और मेरी ख़िलाफ़त में है, चलाने की कोशिश करूँगा ।"

हज़रत उसमान (रज़ि०) के परपोते हज़रत सईद बिन ख़ालिद बिन उमर इब्न उसमान (रह०) ने यह सुनकर ख़लीफ़ा की तारीफ़ की लेकिन ख़ानदान के दूसरे लोग यह फ़ैसला सुनकर ग़ुस्से से होंट काटने लगे ।

एक बार ख़ानदान के लोगों ने उनकी फूफी को सिफ़ारिशी बनाकर भेजा । उन्होंने आकर कहा— "तुम्हारे ख़ानदानवाले शिकायत करते हैं कि तुमने उनसे ग़ैर की दी हुई रोटी छीन ली ।" उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने जवाब दिया, "मैंने उनका हक़ नहीं मारा।" वे बोलीं, "सब लोग इस बारे में आपस में बातें करते हैं । अंदेशा है कि तुम्हारे ख़िलाफ़ बग़ावत न करें ।" फ़रमाया— "अगर मैं क़ियामत के सिवा किसी दिन से डरूँ तो ख़ुदा मुझे उसकी बुराइयों से न बचाए ।"

इसके बाद एक अशर्फ़ी, गोश्त का एक टुकड़ा और एक अँगीठी मँगवाई। अशर्फ़ी को आग में डाल दिया । जब वह पूरी तरह लाल अंगारे की तरह हो गई तो उसको उठाकर गोश्त के टुकड़े पर रख दिया, जिससे वह भुन गया । अब फूफी से कहा—"अपने भतीजे के लिए इस तरह के अज़ाब से पनाह नहीं माँगतीं ?"

जब कुछ ज़्यादा ही चर्चा होने लगी तो एक दिन ख़ानदान के सब लोगों को इकट्ठा किया और देर तक रोके रखा, जब वे सब भूख से बेचैन हो गए तो सत्तू और खजूरें खिलाईं । जब लोग पेट भरकर खा चुके तो रोटियाँ और गोश्त मँगवाया और सबसे कहा, "खाओ।" उन लोगों ने इनकार किया कि अब खा ही नहीं सकते । फ़रमाया, "तो फिर आग में क्यों घुसते हो ?" यानी जब सादे खाने से पेट भर सकता है तो पेट के लिए नाजाएज़ लुक़्मा क्यों माँगते हो ? यह कहकर ख़ुद भी रोए और लोगों को भी रुलाया ।

वफ़ात (मौत)

ख़ानदानवाले वहाँ से उठे तो सब फिर शिकायतें ले बैठे और ख़लीफ़ा की जान लेने की तद्बीरें सोचने लगे । बग़ावत करने की उनमें हिम्मत नहीं थी, क्योंकि तमाम रिआया ख़लीफ़ा के साथ थी । आपस में मशविरा करके आख़िर 20 रजब सन् 101 हिजरी को उन्हें ज़हर दे दिया । हालत ख़राब हुई तो उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) समझ गए । जिस ग़ुलाम ने ज़हर दिया था उसे बुलाया, पूछा—"तुमने मुझे किस लालच में ज़हर दिया ?" उसने कहा "मुझे हज़ार दीनार देकर आज़ाद करने का वादा किया गया है ।"

यह सुनकर ख़लीफ़ा ने वह दीनार मँगवाकर बैतुलमाल में जमा करा दिए और ग़ुलाम से कहा, "तुम आज़ाद हो, लेकिन कहीं ऐसी जगह चले जाओ जहाँ तुमको कोई देख न सके ।" इसके बाद हकीम आया तो उन्होंने इलाज कराने से इनकार कर दिया ।

ज़हर सारे बदन में फैल चुका था । घरवालों के अलावा ख़ानदानवालों में चचेरा भाई मुस्लिम बिन अब्दुल मलिक उनसे बहुत प्यार करता था। उसने बाल-बच्चों का ज़िक्र करते हुए कहा, "अमीरुल मोमिनीन ! आपने अपनी औलाद का मुँह इस माल से ख़ुश्क रखा । इसी लिए आप उनको ऐसी हालत में छोड़ रहे हैं कि उनके पास कुछ भी नहीं है । क्या अच्छा हो कि आप मुझे या अपने ख़ानदान के किसी और आदमी को उनके बारे में कुछ वसीयत कर जाएँ ?" बोले, मुझे टेक लगाकर बिठा दो।" टेक लगाकर बैठे तो फ़रमाया, "तुम्हारा यह कहना कि मैंने उनके मुँह को उस माल से ख़ुश्क रखा। ख़ुदा की क़सम ! मैंने उनका हक़ कभी नहीं मारा । हाँ, जिस चीज़ पर उनका हक़ न था वह उनको कभी न दी । तुम्हारा यह कहना कि मैं तुमको या ख़ानदान के किसी आदमी को उनके बारे में वसीयत कर जाऊँ, तो मैं उनका वली ख़ुदा को बनाता हूँ । ख़ुदा ही नेक बंदों का वली होता है । मेरे बेटे अगर ख़ुदा से डरेंगे तो ख़ुदा उनके लिए कोई रास्ता निकाल देगा, और अगर वे गुनाहों में फँसेंगे तो मैं (माल देकर) गुनाह करने में उनकी मदद न करूँगा ।"

इसके बाद बेटों को बुलाया और नसीहत करते हुए एक छोटी-सी तक़रीर की

जिसके आख़िरी अल्फ़ाज़ ये हैं—

"बेटो ! तुम्हारा बाप दो बातों में से एक बात कर सकता था या तो वह तु को माल देकर मालदार कर देता और ख़ुद जहन्नम में जाता, या यह कि तुमक मुहताज करके ख़ुद जन्नत में जाए । मैं तुमको मुहताज रखकर जन्नत में जाना चाहत हूँ । प्यारे बेटो ! जाओ ख़ुदा तुम्हारा मालिक है ।"

मुस्लिमा बिन अब्दुल मलिक ने अर्ज़ किया, "अमीरुल मोमिनीन ! मैं एव लाख की रक़म देता हूँ । आप उसके बारे में वसीयत कर जाइए ।" फ़रमाया "इस रक़म को जहाँ से लाए हो वहीं वापस कर दो।" यह सुनकर मुस्लिमा रं पड़े ।

लोगों को हुक्म दिया मेरे पास कोई न रहे । लोग पास से हट गए तो पूर ध्यान अल्लाह की तरफ़ लगा दिया । दरवाज़े पर मुस्लिमा बिन अब्दुल मलिव (चचेरा भाई) और बीवी फ़ातिमा बैठी थीं । कुछ देर के बाद उनके कान में आवाज़ आई— "क्या मुबारक़ चेहरे हैं, जो न आदमियों के हैं, न जिनों के ।" इसवे बाद यह आयत पढ़ी—

> "यह आख़िरत का घर है, हमने इसे उन लोगों के लिए बनाया है जो ज़मीन में न बड़ाई चाहते हैं और न फ़साद मचाते हैं, और आक़बत तो अल्लाह की नाफ़रमानी से डरनेवालों के लिए है ।" —क़ुरआन

यह आयत पढ़ने के बाद आवाज़ आनी बंद हो गई । दरवाज़े पर बैठे हुए भाई ने फ़ातिमा से कहा, "अमीरुल मोमिनीन का इन्तिक़ाल हो गया।" इसके बाद अंदर जाकर देखा गया तो वाक़ई आपका इन्तिकाल हो चुका था—"इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन"

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) बीस दिन बीमार रहे और 25 रजब सन् 101 हिजरी, बुध के दिन 39 साल की उम्र में उनका इन्तिक़ाल हुआ । लोगों को मालूम हुआ तो चारों तरफ़ ग़म का माहौल छा गया । इमाम हसन बसरी (रह०) ने सुना तो **"इन्नलिल्लाह"** पढ़कर पुकार उठे "ऐ हर नेकी के मालिक !" तमाम उलमा बीवी फ़ातिमा के पास आए और कहा, "यह मुसीबत तमाम उम्मत के लिए है ।" मुल्क के कोने-कोने में लोगों ने उनकी नेकियों का ज़िक्र किया । रोम के ईसाई बादशाह को ख़बर पहुँची तो वह रो पड़ा । लोगों ने वजह पूछी तो बताया— "आज एक नेक मर्द का इन्तिक़ाल हो गया ।" इसके बाद उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की तारीफ़ करके बोला, "मुझे उस राहिब की हालत पर कोई अचंभा नहीं जिसने अपने दरवाज़े बंद करके दुनिया को छोड़ दिया और इबादत में लग गया । मुझे तो उस आदमी की हालत पर अफ़सोस होता है, जिसके

क़दमों के नीचे दुनिया थी और उसने इसको रौंदकर फ़क़ीरों की ज़िंदगी बसर की ।"

एक और पादरी ने सुना तो बेइख़तियार रोने लगा, लोगों ने उससे पूछा, "तुम क्यों रोते हो ? वह तो तुम्हारे धर्म के न थे ।" बोला, "मैं उनको नहीं रोता, मैं तो उस नूर को रोता हूँ जो ज़मीन पर था और अब बुझ गया ।"

मुद्दतों लोग़ उनको रोते रहे । शायरों को उन्होंने कभी कुछ नहीं दिया, मगर इन्तिक़ाल हुआ तो उन्होंने बड़े दर्दनाक मर्सिए लिखे ।

आइए हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) की याद फिर ताज़ा कर लें ।

● उनके वालिद अब्दुल अज़ीज़ उमैया ख़ानदान के एक बाअसर और आलिमों की इज़्ज़त करनेवाले इनसान थे और माँ उम्मे-आसिम हज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) की पोती और बहुत ही नेक औरत थीं ।

● उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) ने अब्दुल्लाह बिन उमर (रजि०) और सालेह बिन कैसान जैसे बुज़ुर्गों की निगरानी में मदीने में तालीम पाई ।

● उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) अपने वक़्त के सबसे बड़े आलिम थे ।

● ख़लीफ़ा अब्दुल मलिक ने अपनी बेटी से शादी करके उन्हें एक सूबे का गवर्नर बना दिया ।

● उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) अपने वक़्त के सबसे बड़े शौक़ीन और शानो शौकतवाले शहज़ादे थे ।

● ख़लीफ़ा हुए तो बचपन की तालीम व तरबियत उभर आई और शानो शौकत छोड़कर बिगड़ी हुई ख़िलाफ़त को ख़िलाफ़ते राशिदा जैसा बना दिया ।

समाज के सुधार के लिए उन्होंने चार तरीक़े अपनाए —

1. लोगों की सोच में बेहतरी लाने के लिए लोगों को दीन की तरफ़ तवज्जोह दिलाई ।

2. लोगों को अच्छी तालीम हासिल कराने के लिए क़ुरआन व सुन्नत की तबलीग़ की । लाईब्रेरी और मदरसे क़ायम किए ।

3. मुल्क में अच्छी सोहबतों के लिए हलक़े क़ायम किए और बाअमल लोगों को उन हलक़ों का निगराँ मुक़र्रर किया ।

4. अच्छी हुकूमत क़ायम की और उससे अल्लाह की रहमत नाज़िल हुई ।